दोनों के चक्षु से जल गिरते देख कर, सबों के चक्षु से अश्रुपात होने लगा।

कुछ काल के पश्चात् रामानन्द पहिले के तुल्य निस्तेज हो गये। क्रमशः पूर्णतः अचैतन्य हुए। उन का कंठावरोध हुआ तब प्रेमानन्द ने उन को रूपा की गोद से अपनी गोद में बैठाया। सत्यवती अंचल से उन को वायु करने लगी। वायु करनें के लिये कुटी में एक ताड़ का पंखा भी नहीं था।

प्रायः आधे घंटे में फिर रामानंद चैतन्य हुए, किन्तु शरीर में कुछ भी बल नहीं। अति कष्ट से ओर भग्न स्वर से पुत्र और पुत्र बधू से कहने लगे—"पुत्र! मैं ऋण ग्रस्त होकर चला ऋण से मुक्त करने का क्या उपाय करोगे?"

सत्यवती। (आंखों में आंसू भर कर) मैं अपने को बेच करके भी आप का ऋण परिशोध करूंगी। मैं रानी भवानी के गृह में दासी वृत्ति अवलम्बन कर आप को ऋण से उद्धार करूंगी।

प्रेमानन्द ने अपनी स्त्री से पूछा किस के ऋणी हुए हैं।

सत्यवती। जीवन में एक बार के सिवाय और

कभी रुपया कर्ज नहीं लिया। दुर्भिक्ष के साल पुरनिया की ब्रह्मत्र के लिये देवी सिंह ने जमा का तगादा किया था। तब रानी भवानी से पचास हज़ार रुपया कर्ज लिया था। इसके सिवाय और कोई ऋण नहीं है।

रामानंद ऋण की बात कह कर फिर चैतन्य-हीन हुए। प्रेमानन्द तब पिता की चैतन्य करने के लिये पुकारने लगे—

"बाबा! बाबा!"

कोई उत्तर नहीं,

"बाबा! बाबा ऋण के लिये आप क्यों इतना कष्ट मानते हैं। मैं जिस भांति हो सकेगा आपको उऋण करूंगा।

रामानंद (अति क्षीण स्वर से) कैसे करोगे—क—हां—रुपया—पा—ओ—गे।

प्रेमानन्द। मैं रङ्गपुर से फिर आकर आप का ऋण उद्धार करूंगा।

रामानंद। ब—हु—त—देरी—हो—गो—वा—र—ह—ब—र—स—का—ऋण।

सत्यवती। (रोती रोती) बाबा मुझे छोड़

कर चले। तुम्हारे स्वर्ग चले जाने पर, मैं एक मुहूर्त भी बिलम्ब न करके, आप का ऋण चुकाने के लिये चली जाऊंगी। मैं रानी भवानी के घर में तुम्हारा ऋण चुका दूंगी।

रामानंद। ऋणी—की—स—र—ग—नहीं।

प्रेमानंद। ऋण की चिन्ता आप परित्याग कीजिये। जैसे हो सकेगा मैं ऋण का उद्धार करूंगा।

रामानंद। व—ह—का—ग—ज

प्रेमानंद और सत्यवती रामानन्द के इस कथन का कुछ भी अर्थ न समझ सके। तब कमला देवी ने कहा "कुछ काल हुए इन्हीं ने कहा था, इनकी भिक्षा की झोली में एक कागज़ है। उस कागज़ में जो कुछ लिखा है वह समाधि स्तम्भ में लिखना पड़ेगा।

रामानन्द के भिक्षा की झोली को सत्यवती प्राण नगर की कुटी से भागने के समय संग लेती आई थी उसी झोली से एक पीत वर्ण का कागज़ उन्हीं ने निकाला प्रेमानन्द ने उस कागज़ को पढ़ा उसमें लिखा हुआ था——

"पापात्मा दुर्मति रामानन्द गोस्वामी ने आत्म रक्षार्थ जिस पथ का अवलम्बन किया था, वह

केवल आत्मविनाश का पथ है। समाजस्थ अत्याचार निपीड़ितों को अत्याचारियों के निष्ठुराचरण से रक्षा करने के निमित्त आत्मत्याग न करने से इस संसार में कोई आत्मरक्षा नहीं कर सकता। यदि कोई आत्मरक्षा करने की इच्छा करे, तो रामानन्द के सुपुत्र प्रेमानन्द की भांति समाज व्याप्त पाप और अत्याचार के सङ्ग संग्राम करने में प्रस्तुत होवे। दुर्मति रामानन्द गोस्वामी के दान, धर्म, सदाब्रत और अतिथिशाला कुछ भी उसको वर्त्तमान समाज व्याप्त अत्याचार रूपी अनल से उत्पन्न दावाग्नि से रक्षा नहीं कर सका। मूढ़ मति पापात्मा रामानन्द की अंत काल की इस दुर्दशा के इतिहास को पढ़ने से भी, यदि तुम्हारे ज्ञान का उदय न हो, तुम्हारी निद्रा भङ्ग न हो, तुम्हारा मोहान्धकार दूर न हो, तो निश्चयही तुम में मनुष्यात्मा नहीं। तुम रामानन्द की भांति भ्रम जाल में फंसे हुए हो। रामानन्द की भांति कष्ट भोग करोगे।

प्रेमानन्द के इस कागज़ को पढ़तेही सत्यवती ने रोते रोते कहा—

'मेरे श्वशुर पुण्यात्मा—मेरे श्वशुर धार्मिक।

अपने श्वशुर के समाधि स्तम्भ में कभी पापात्मा दुर्मति न लिखने देऊंगी ।

तब प्रेमानन्द ने पापात्मा शब्द को काट कर वहां 'पुण्यात्मा' शब्द, दुर्मति के स्थान में 'सदाचारी' और मूढ़ मति के स्थान में 'परम वैष्णव" शब्द लिख दिया ।

इस के पश्चात् रामानन्द का घन घन श्वास चलने लगा । अब बात नहीं कर सकते । सत्यवती उनके कर्ण के निकट मुख रख कर हरि नाम कहने लगी । पुत्र और पुत्र बधू के मुख की ओर अंतिम दृष्टि निक्षेप कर परम वैष्णव रामानन्द ने नयन मूंद लिया । इस घोर अत्याचार परिपूर्ण नरक सदृश बङ्गदेश को परित्याग कर वैष्णव श्रेष्ठ रामानन्द ने स्वर्ग बास किया ।

मृत्यु के पश्चात प्रेमानन्द ने सत्यवती से कहा "मैं अभी रङ्गपुर चला जाऊंगा पिता की अंत्येष्टि क्रिया पर्य्यन्त भी बिलम्ब नहीं करूंगा । मेरी उत्तेजना से रङ्गपुर की प्रजा संग्राम में अग्रसर हुई है । मुझे प्राणत्याग करके भी उनके शुभाशुभ की ओर दृष्टि करना उचित है । तुमने गत बारह वर्षों से पिता की सेवा सुश्रुषा की है । तुम ही धन्य हो ! पिता

का मुखानल और श्राद्धादि सब तुमही करो। तुम और हम एकाङ्ग और एकात्मा हैं। तुम्हारे श्राद्ध करनेसे वह मुक्ति पा जावेंगे। मैं कृतघ्न सन्तान हूं। मेरे जीवित रहने से मेरे पिता ने बारह वर्षों तक इतना कष्टभोग किया है यह दुःख मेरे हृदय से कभी दूर नहीं होगा। उपस्थित आत्मीय स्वजनों के साथ पिता की मृत देह लेकर तुम अभी श्मशान को चली जाओ। मेरे पैतृक घर में मेरी जननी के समाधि स्तम्भ के दक्षिण पार्श्व में पिता का समाधि क्षेत्र बनाना। और बहुत शीघ्र समाधि स्तम्भ बनवा कर इस कागज़ को लिखी हुई कई एक बातों को समाधि स्तम्भ में लिखवा देना।

यह कह कर प्रेमानन्द रङ्गपुर की ओर चले गये। रामानन्द की मृत देहके साथ सत्यवती कमला देवी, रूपा, जगा श्मशान को चले। रामानन्द के आत्मीय ब्राह्मण गण ने मृत देह को कंधे पर धर कर श्मशान की ओर यात्रा की।

अंत्येष्टि क्रिया समाप्त होने पर सत्यवती ने रामानन्द के समाधि स्तम्भ में ऐसा लिखवाया।

समाधि स्तम्भ ।

पुण्यात्मा सदाचारी रामानन्द गोस्वामी ने
आत्म रक्षार्थ जिस पथ का अवलम्बन किया था
वह केवल आत्म विनाश का पथ है ।
समाजस्थ अत्याचार निपीड़ितों को
अत्याचारियों के निष्ठुराचरण से रक्षा करने के निमित्त
आत्मोत्सर्ग न करने से
इस संसार में कोई भी आत्मरक्षा नहीं कर सक्ता ।
यदि कोई आत्मरक्षा करने की इच्छा करे,
तो रामानन्द के सुपुत्र प्रेमानन्द की भांति समाज व्याप्त
पाप और अत्याचार से संग्राम करने को प्रस्तुत होवे ।
धर्मात्मा रामानन्द गोस्वामी के
दान, धर्म्म, सदाव्रत और अतिथिशाला कुछ भी
उनको वर्त्तमान
समाज व्याप्त अत्याचार रूपी अनल से उत्पन्न
दावाग्नि से
रक्षा नहीं कर सकते ।
परम वैष्णव रामानन्द के
अन्तकाल की इस दुरवस्थाका इतिहास पाठ
करने पर भी

यदि तुम्हारे ज्ञान का उदय न हो,
तुम्हारी निद्रा भङ्ग न हो,
तुम्हारा मोहान्धकार दूर न हो,
तो तुम में निश्चय ही मनुष्यात्मा नहीं,
तुम रामानन्द की भांति भ्रम जाल में पड़े हुए हो।
रामानन्द की भांति अत्यन्त कष्ट भोग करोगे।
११८९ साल के माघ को २४ वीं तारीख
जनवरी सन् १७८३ ई०।
सत्यवती द्वारा प्रतिष्ठित।

षड्‌विंश अध्याय ।

ऋण मुक्ति ।

रामानन्द के समाधि स्तम्भ की प्रतिष्ठा के पश्चात सत्यवती श्वशुर के ऋण उद्धार का उपाय करने लगी। कमला देवी से बहुत बिचार करके स्थिर किया, कि ऋण के बदले में श्वशुर के पैतृक घरवाड़ी को रानी भवानी के पास रेहन कर देऊंगी। घर वाड़ी से वह अभी तक बेदखल नहीं हुए हैं। किन्तु घर वाड़ी के मूल्य से यदि सम्पूर्ण ऋण चुकता नहीं हुआ, तो प्रेमानन्द के ऋण उद्धार न करने तक हम रानी भवानी के गृह में टहलनी होकर रहेंगी।

ऐसाही स्थिर करके सत्यवती कृपा को संग में लेकर नाटोर को चली। जगा और कमला देवी उसके लौटने तक रामानन्द के मालदह के गृह में रहने लगे।

सत्यवती दो तीन दिन में ही नाटोर पहुंच कर रानी भवानी से भेंट करने की चेष्टा करने लगी उसके पहनने का एक मात्र जीर्ण बस्त्र था। इस भांति कंगालिनी के वेश में राज प्रसाद के द्वार पर उपस्थित होने

से, द्वारवान गण अनादर करके निकाल दे सकते हैं। इसी आशंका से उसने प्रथम राज प्रसाद के निकटवर्त्ती एक स्त्री के गृह में आश्रय लिया। पश्चात उसी स्त्री के द्वारा रानी भवानी के निकट समाचार भेजा।

रामानन्द गोस्वामी का नाम रानी भवानी से अज्ञात नहीं था। रामानन्द पर रानी भवानी विशेष श्रद्धा करती थी। सुतरां रामानन्द की पुत्रबधू बिपद में पड़ कर, उनसे साक्षात करने को आई हैं सुन कर उन्हों ने तुरन्त ही उसे अपने गृह में लाने के लिये एक पालकी और तीन चार दासियों को भेज दिया। उनके प्रेरित दासी गण ने सत्यवती को इस भांति कंगालिनी के वेश में देख कर आश्चर्य किया।

सत्यवती मालदह से नाटोर प्यादे पांव आई है। उसे पालकी की आवश्यकता नहीं थी। किन्तु पीछे रानी असन्तुष्ट होंगी, इस लिये इच्छा न रहने पर भी पालकी में चढ़ कर राज गृह के अन्तःपुर में प्रवेश किया। रानी ने उसको स्नेह से और आदर युक्त वचन से गृहण किया।

रानी भवानी ने उसे जीर्ण मलीन बस्त्र पहने

हुए देख कर, उसके बर्त्तमान दुरवस्था का कारण पूछा। तब सत्यवती ने १७७१ साल में प्रेमानन्द को देबी सिंह के आदमियों से पकड़े जाने के पश्चात् गत चोदह वर्षों से जिस प्रकार बिपद और यन्त्रणा सहन किया है, वह सब एक एक कर रानी से कहा। परम दयावती कोमल हृदया रानी भवांनी उसकी इन सब बिपदों की बात सुन कर हाहाकार कर के रोदन करने लगी। अंत को सत्यवती जिस अभिप्राय से रानी के निकट आई थी उसे, कहतेही रानी ने क्रोध के साथ कहा—

"पुत्री! मुझे क्या रामानन्द गोस्वामी चाण्डालनी समझते हैं ?"

सत्यव्रती। आप को वह परम आराध्या देव कन्या ही जानते थे।

रानी। ऐसा होने से इस दुरवस्था के समय तुम लोग ऋण उद्धार करने के निमित्त इतने आकुल न होते। विशेषत: मैंने तो रामानन्द गोस्वामी से इन रुपयों को पुन: गृहण करने का कभी बिचार भी मन में नहीं लाया।

सत्यवती। उन्हीं ने रुपया दे देने के बिचार से

आप से ऋण लिया था। आपके इन रुपयों को न लेने से वह चिर काल तक ऋणी रहेंगे।

रानी। दान कर उन्हीं रुपयों को फिर लेने से मेरा भी धर्म्म भ्रष्ट होगा।

सत्यवती। आपने क्या दान कह कर उन को रुपया दिया था?

रानी। पुत्री! उस दुर्भिक्ष के साल अनेकानेक जमीदारों को राजस्व अदा करना साध्य नहीं था। अर्थ लोलुप कम्पनी के आदमियों ने सब जमींदारों से दैनगी राजस्व तलब किया। जमीदारों को धमकाने लगे कि जिन्होंने उनका राजस्व अदा नहीं किया है, उनको उनकी पैतृक जमीदारी से निकाल देंगे। मैंने तब अपनी जमीदारी का राजस्व अदा न कर के भी अन्यान्य जमीदारों की जमीदारी के रक्षा के निमित्त, किसी को दस हज़ार किसी को बीस हज़ार, किसी को पचास हज़ार रुपया दिया था। उसी से अनेकानेक जमीदारों के जमीदारी की रक्षा हुई। किन्तु मेरे एक परगना का राजस्व अदा नहीं हुआ। कम्पनी ने मुझे उस परगना से निकाल दिया * । मेरी उस एक परगना की जमीदारी गई

* Vide note (7) in the appendix.

है सही किन्तु मुझे कोई कष्ट बोध नहीं होता है। किन्तु अनेकानेक गरीब जमीदार और ब्राह्मण जमीन के मालिक अपनी २ पैतृक सम्पत्ति रक्षा करने में समर्थ हुए, वही मेरे सुख का विषय है। उस वर्ष जिस जिसको रुपया दिया था, उन में से किसी से भी रुपया नहीं लिया। रामानन्द गोस्वामी को रुपया देने के समय उनसे इन रुपयों के लेने की आशा मैंने कभी नहीं की सुतरां वह किसी प्रकारसे भी मेरे ऋणी नहीं हैं।

सत्यवती। उन्होंने कहा है कि मैंने पत्र देकर रुपया लिया है। इन रुपयों को अवश्य ही उन्होंने ऋण लिया था।

रानी। मैंने उनको कभी पत्र देने के लिये नहीं कहा। उनकी पत्र देने की इच्छा होने से मैंने उनको बारम्बार निषेध किया था। किन्तु गोस्वामी की मूर्खता तो तुम लोगों को अविदित नहीं है। पत्र न लेने से हम रुपया न लेंगे, कह कर चले जाने को उद्यत हुए। तब मैंने फिर कहा "आपकी जैसी इच्छा है वैसा लिख दीजिये।" उन्होंने एक कागज़ लिखा था" 'धर्म्म को साक्षी कर आपसे ५००००) पचास हज़ार रुपया कर्ज़ लिया।"

सत्यवती। तब तो उन्हों ने ऋण कह कर रुपया लिया है। उन के उसी ऋण परिशोध के निमित्त हम अपने घर द्वार रेहन कर देंगे। और मैं स्वयं परिचारिका होकर आप के गृह में रहूंगी।

रानी। तुम्हारी इच्छा है तो ऐसे विपद के समय मेरे गृह ही में रहो। मैं अपनी कन्या के सदृश तुम को अपने गृह में रक्खूंगी। मेरी पुत्र बधू तुम्हारी सेवा करेगी।

सत्यवती। मैंने श्वशुर की मृत्यु शय्या में अंगीकार किया है कि उन का ऋण चुका दूंगी उन का ऋण उद्धार न करने से मेरी प्रतिज्ञा भ्रष्ट होगी।

रानी। गोस्वामी का ऋण होगा तो पटा देगी? उन्हों ने धर्म्म साक्षी करके मेरा रुपया ऋण लिया है। मैं भी धर्म्म साक्षी करके कहती हूं, कि मैं ने कभी उन को कर्ज़ के तौर पर रुपया नहीं दिया वह कभी मेरे निकट ऋणी नहीं हैं। तुम अब यदि उन रुपयों को ऋण समझो, तो फिर मैं धर्म्म साक्षी करके कहती हूं, कि रामानन्द गोस्वामी को मैं ने सम्पूर्ण ऋण से मुक्त किया।

सत्यवती। रुपया न पाकर ही ऋण से छुटकारा दे दिया?

रानी। (किञ्चित् हास्य करके) उन की परम पुण्यवती पुत्र बधू, जिस ने पुण्य के बल से अपने श्वशुर और स्वामी को कारागार से मुक्त किया है, उस की पद धूलि के मूल्य के परिवर्त्तने में ऋण से रामानन्द को छुटकारा दिया।

रानी भवानी के इन सम्पूर्ण स्नेह पूर्ण वाक्य को श्रवण कर सत्यवती के चक्षु से आनन्दाश्रु बहने लगा। वह रानी के अनुरोध से वहां तीन दिन तक रही। रानी भवानी उस को स्नेह पूर्वक अपनी पुत्र बधू रानी सर्व्वाणी के सङ्ग एकासन में बैठा-लती, एकत्र आहार कराती। ठीक पुत्र बधू की भांति उस पर स्नेह करती। तीन दिनके पश्चात् उन्होंने अनेक धन रत्न सङ्ग देकर सत्यवती को पालकी में बैठा कर मालदह में पहुंचा दिया।

—※—

सप्तविंश अध्याय ।

मुगलहाट का युद्ध ।

प्रेमानन्द गोस्वामी ने पितृ वियोग के पश्चात् आधे पल भी विलम्ब न करके अश्व पर आरोहण कर रङ्गपुर की ओर यात्रा किया। रङ्गपुर के अत्याचार निपीड़ित प्रजा गण ने माघ की १म तिथि से देवी सिंह के आदमियों से युद्ध करना आरम्भ किया था। इस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीन रङ्गपुर दिनाजपुर के जितने बरकन्दाज़ और सिपाही थे, वह प्रायः सब ही प्रेमानन्द के रङ्गपुर पहुंचने के पूर्व ही प्रजा गण से मारे गये थे।

रङ्गपुर के कलेक्टर गुडलैड साहेब ने इस समय लाचार होकर लेफ़्टिनेन्ट मेकडोनेल्ड को सेनाध्यक्ष के पद पर नियुक्त किया। किन्तु प्रजा गण स्थान स्थान में दल बांध रहे थे। उन लोगों को परास्त करना लेफ़्टिनेन्ट को अत्यन्त कठिन हुआ। तब बुद्धिमान् गुडलैड ने हुक्मनामा नम्बरी ५ का निकाला * इसी हुक्मनामा के द्वारा लेफ़्टिनेन्ट

* Vide note (18) in the appendix.

मेकडोनेल्ड जिस को पकड़ते, उस का ही बध कर डालते। और जिस ग्राम में जाते उस ग्राम के सम्पूर्ण कृषक और कुलियों के घर जला देते। प्रेमानन्द के परामर्श से जिन सम्पूर्ण ग्रामों की प्रजा दलबद्ध हुई थी, उन का कुछ भी न कर सके। किन्तु अनेकानेक निरपराधी कुली और कृषक मारे गए, और उन लोगों के घर द्वार सब भस्मीभूत हुए।

प्रेमानन्द ने रङ्गपुर के एक एक ग्राम को पार कर अभीष्ट स्थान में जाने के समय देखा कि ग्राम जन शून्य हो रहे हैं। कृषक और कुलियों के गृहों का चिन्ह भी नहीं है। ग्राम के जिन जिन स्थानों में गृहादि थे, अब वहां भस्म ढेर के ढेर पड़े हुए, हैं। वह पकड़ कर कलकत्ता न भेजे जाते, तो कभी ऐसी अवस्था न होती। व्यर्थ में मनुष्यों के प्राण बिनाश करने को उन्हों ने किसी को भी संमति नहीं दिया। वह युद्धार्थियों से स्पष्टाक्षर में कह गये थे, कि जो कोई अपने २ स्वार्थ के अनुरोध से, राज्य लाभ के उद्देश्य से किम्बा पद प्रभुत्व लाभ करने के अभिप्राय से युद्ध करता है, वह आततायियों के समान सहस्र सहस्र नर हत्या करके अपना

हस्त कलङ्कित करता है; मानव मण्डली का घोर अनिष्ट साधन करता है; और अन्त में ईश्वर के निकट अपराधी होता है। किन्तु इस के विरुद्ध जन विशेष की स्वाधीनता रक्षा के निमित्त और देश प्रचलित अत्याचार का निवारण करके समग्र मानव मण्डली के उपकार के लिये जो कोई अस्त्र धारण करे, वह स्वेच्छा से कभी नर हत्या न करे, सम्पूर्ण मानव मण्डली का मङ्गल साधन ही उस का एकमात्र उद्देश्य, है सुतरां जितने बल का प्रयोग करने से अत्याचार निवारित हो सक्ता है, उस से अधिक बल का प्रयोग करके कभी पशुवत् आचरण न करे।

किन्तु अशिक्षित प्रजागण उसके इस उपदेश का मर्म समझने में बिलकुल असमर्थ थे। सुतरां एक ओर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आदमियों ने जैसा पशुवंत् आचरण करके अनेकानेक निरपराधी मनुष्यों का प्राण नष्ट किया था, वैसेही रङ्गपुर के प्रजागण भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बरकन्दाज़ों और सिपाहियों का प्राण बध करने लगी।

प्रेमानन्द ने रङ्गपुर पहुंचकर मोगलहाट के निकटवर्त्ती स्थान में नूरूल मुहम्मद और दयाराम

से साक्षात किया। नूरुल मुहम्मद नव्वाब उपाधि धारण कर के प्रजाओं के सेनापति हुए थे। दयाराम नूरुल मुहम्मद के दीवान होकर देश के अन्यान्य प्रजागण से युद्ध का खरचा ग्रहण करते थे।

ये प्रेमानन्द को पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए। किन्तु अकस्मात ईस्टइण्डिया कम्पनी के सैन्यगण ने आकर इन लोगों पर आक्रमण किया। नूरुल मुहम्मद के पक्ष के बहुत से मनुष्य पाट ग्राम में थे इस समय कलेक्टर गुडलैड से इन लोगों की सन्धि का प्रस्ताव होता था। इसी से मुगलहाट मे पचास आदमियों से अधिक नहीं थे। किन्तु ईस्टइण्डिया कम्पनी के सैन्यगण को संग्राम के लिये इन लोगों के निकट आतेही ये लोग निः शंक संग्राम क्षेत्र में अग्रसर हुए। अत्यल्प अस्त्र शस्त्र लेकर प्रायः चार घन्टा युद्ध किया था। किन्तु मनुष्य संख्या न्यून होने के कारण इनको परास्त होना पड़ा। ये लोग रण क्षेत्र से भाग कर अनायासही आत्मरक्षा कर सकते। किन्तु संग्राम क्षेत्र से भागने की अपेक्षा सन्मुख संग्राम में प्राणत्याग करना ही स्थिर कर के इन लोगों में से एक ने भी पलायन

नहीं किया। दयाराम ने इस युद्ध में प्राण विसर्ज्जन किया नूरूल मुहम्मद घायल हुए। इस के कई एक दिन पीछे उनकी मृत्यु हुई। प्रेमानन्द ने अन्यान्य मनुष्यों के सहित सायंकाल तक युद्ध किया। दोनों पक्ष के कई एक मनुष्य कटे और घायल हुए। सुतरां सन्ध्या के पश्चात् अन्धकार होतेही युद्ध भङ्ग हुआ। प्रेमानन्द आठ मनुष्यों को सङ्ग लेकर पाट ग्राम को चले गये। पाट ग्राम के सैन्य गण मुगल हाट की दुर्घटना सुन कर अत्यन्त दुःखित हुए। किन्तु प्रेमानन्द उनको समझा कर कहने लगे।

"भाई जय पराजय दोनों ही हम लोगों को समान है हम राज्य लाभ के निमित्त युद्ध करने नहीं आये। देश प्रचलित अत्याचार को निवारण करके सब मानव मण्डली का उपकार करनाही हमारा एक मात्र उद्देश्य है। हमारे सब प्रकार से पराजित होने पर भी, ईस्टइण्डिया कम्पनी देवी सिंह की भांति नर पिशाच को राजस्व आदान का भार देकर अब प्रजा पर अत्याचार करने में कभी साहस नहीं करेगी। जिस अत्याचार के निवारण के लिये युद्ध क्षेत्र में आये थे, वह अत्याचार दूर

हुआ है। इस लिये हम लोगों की दुःख का कोई कारण नहीं दिखाई देता। किन्तु हम लोग यदि संग्राम के लिये प्रस्तुत न होते तो इस अत्याचार का स्रोत सर्बदा ही बहता रहता। सदैव देवी सिंह के कारागार में सैकड़ो प्रजाओं का प्राणनाश होता, सैकड़ों कुल कामिनियों का धर्म्म नष्ट होता।

"इस भयानक अत्याचार के निवारण के लिये जिन्होंने संग्राम में प्राण बिसर्ज्जन किया है इतिहास में स्वर्णाचर से उनका नाम मुद्रित होगा। भावी बंश वाले देवता कह कर उनकी पूजा करेंगे। इस अनित्य देह को सम्पूर्ण मानव मण्डली के उपकार के लिये जो कोई परित्याग करेगा वह निश्चयही देवता है।"

—*—

अष्टविंश अध्याय।

पाटग्राम कलङ्क।

प्रेमानन्द ने पाट ग्राम में पहुंच कर समझा था, कि मुगल हाट के युद्ध के पश्चात् फिर युद्ध न होगा। उन के ऐसा सोचने का विशेष कारण था। कलिक्टर गुडलैड साहेब बारम्बार परवाना द्वारा प्रचार करने लगे, कि प्रजा गण अस्त्र शस्त्र परित्याग कर दें, तो भविष्यत् में राजस्व अदा के सम्बन्ध में और उन पर कोई अत्याचार न होगा; सन् ११८७ ई० में उन्हों ने जिस निर्ख़ से राजस्व दिया था, उस से अधिक ऊंचे निर्ख़ की उन से कोई राजस्व की दावी न कर सकेगा; और कभी किसी प्रकार का अब्वाब या चन्दा नहीं देना पड़ेगा।

इन सम्पूर्ण परवानों को जारी होते देख कर प्रेमानन्द ने प्रायः सब प्रजाओं को विदा कर दिया। केवल अस्सी नब्बे मनुष्य उस के सङ्ग पाट ग्राम में थे।

किन्तु मुगल हाट के युद्ध के दो दिन पश्चात् २२ वीं फ़रवरी सन् १७८३ ई० में ईष्ट इण्डिया कम्पनी के सिपाही गण वस्त्र के नीचे अस्त्र शस्त्र

लुक्का कर, बरकन्दाज़ के बेश में इन लोगों के निकट आने लगे। *

प्रेमानन्द और उस के पच्च के मनुष्यों ने सोचा, कि यह लोग गुडलैड साहेब का परवाना लेकर आये हैं किन्तु क्रमश: एक आया फिर दूसरा आया, ऐसे ही अनेक मनुष्य आ एकत्र हुए।

प्रेमानन्द के पच्च के मनुष्यों के निकट उस समय अस्त्र शस्त्र कुछ भी नहीं था। सिपाहियों ने बरकन्दाज़ के बेश में आकर इन लोगों पर आक्रमण कियां। प्रेमानन्द ने और सब मनुष्यों को भाग जाने के लिये कह कर स्वयं संग्राम क्षेत्र में नूरुल-मुहम्मद की भांति प्राण परित्याग करना स्थिर किया। उन्हों ने अपने पास के मनुष्यों से कहा, कि तुम लोग भाग कर जीवन रच्चा करो, किन्तु मैं कभी भाग कर जीवन रच्चा नहीं करूंगा।

उस के पच्च के मनुष्य एक स्वर से कह उठे—

"अपने नायक को त्याग कर कभी आत्म रच्चा नहीं करेंगे।" यही कह कर सैन्य गण उसे घेर कर खड़े हुए। ये सब ही कहने लगे "देबी सिंह

---

* Vide note (19) in the appendix.

के कारागार में तो पच मरते। किन्तु जिस ने सत परामर्श और उपदेश किया उसी से हमारे पुत्र पौत्र गण देवी सिंह के अत्याचार से छुटकारा पायेंगे, जिस की सत् संमति ग्रहण किया, उसी से भविष्यत में जननी, स्त्री, भगिनी और कन्या का फिर कभी धर्म नष्ट न होगा, आज उस ही को अकेले संग्राम क्षेत्र में परित्याग कर हम कभी पलायन नहीं करेंगे।"

सबही प्रेमानन्द को घेर कर खड़े हुए। प्रेमानन्द की जीवन रक्षा करने के निमित्त सबही अपना अपना जीवन परित्याग करने लगे।

इस ओर बिपक्षीगणने गोला चला कर एक २ कर के पांच मिनिट में प्रायः ५० मनुष्यों को भूतल शायी किया। जब केवल तीस ही मनुष्य जीवित रहे तब प्रेमानन्द ने उन से भाग कर आत्म रक्षा करने को कहा। किन्तु उसे परित्याग करके उन्होंने पलायन करना स्वीकार नहीं किया।

तब प्रेमानन्द ने सोचा, व्यर्थ क्यों यह लोग मेरे निमित्त प्राण त्याग करें। विशेषतः जब कि विपक्षी गण छल स्वरूप से आये हैं। तब भाग कर

अपनी रक्षा करने में कोई दोष नहीं है। विपक्ष दल आततायियों के भांति कार्य्य करते हैं। अन्त में उसने उन बाकी तीस मनुष्यों को सङ्ग लेकर पलायन किया। पाटग्राम का यह युद्ध पाटग्राम कलंक के नाम से अङ्ग इतिहास में लिखा गया।

पाट ग्राम के युद्ध में कई एक मनुष्य काम आये थे, उन के सिवाय प्रेमानन्द के पक्ष के और किसी को सिपाही और जमादार गण पकड़ न सके। किन्तु बिद्रोही प्रजाओं को पकड़ ले जाने का हुक्म था। सुतरां कम्पनी के जमादार, बरकन्दाज़ और सिपाहियों के दल के दल चहुं ओर छूटे। सम्पूर्ण ग्राम शून्य पड़ा हुआ है। मनुष्य एक दम नहीं पाये जाते। तीन कूली सायं काल को पाट ग्राम से होकर घर जाते थे। सुलना शेख मुहम्मद जमादार ने उनको पकड़ लिया। *

द्वितीय जमादार मिरज़ा मुहम्मद अतहर और किसी ओर को गया था। वह अनेक चेष्टा कर के भी किसी मनुष्य को भी न देख सका। किन्तु राह के किनारे के एक वृद्धा चाण्डालिनी का २२

* Vide note (20) in the appendix.

वर्षका पुत्र जो दो वर्ष से ज्वर और प्लीहा रोग से शय्यागत था, मिरज़ा मुहम्मद अतहर और मनुष्यों को न पाकर उस चाण्डालिनी के पुत्र को ले चला। किन्तु पिलही के बृद्ध होने के कारण उसके पेट का भार प्राय: आधे मन का हो गया है। वह चल नहीं सक्ता।

चाण्डालिनी ने आकर रोते २ कहा, "साहबो, मोर बिटवा के जो आपन लिहे जात अहैं, तो गोद में लिहे जाव। मोर बिटवा का बिराम शरीर अहै सकारे किछु खिउंड़ा खैवे का दीहौ।"

अतहर मुहम्मद आगे फिर क्या करें। जीवित मनुष्यों को पकड़ने का हुक्म था। मरे तुल्य मनुष्य को पकड़ ले जाने से कोई फल नहीं। तो भी उसने उसी चाण्डालिनी के पुत्र को कंधे पर लेकर ले जाने के निमित्त दो बरकन्दाज़ो को हुक्म दिया। वे इस पिलही रोग ग्रस्त मनुष्य को कंधे पर लेकर चले।

ऐसेही तिलक चांद प्रभृति कई एक जमादारों में से, जो जिस ओर को गया था, वहां से किसी ने अन्धा किसीने लूला, किसी ने काना किसीने लंगड़ेको पकड़ लाया और बड़े उत्साह से चला।

सैन्यगण ने युद्ध में जय पाया है। तिसपर भी इन जमादार और सज्जावल गण ने कम से कम बाइस मनुष्यों को जीवित पकड़ा है। इस से जमादारों के आनन्द की और सीमा नहीं रही। सभों ने मनही मन स्थिर किया कि गुड़लैड साहब से बख़्शिश पायेंगे।

ऊनत्रिंश अध्याय

पिटरसन साहब।

कुकार्य्य, बुरे आचरण और अत्याचार किये हुए को कोई भी छिपा नहीं सकता। ईश्वर के अखण्डनीय नियम के अनुसार समय पर सबही प्रकाश हो जाता है। मनुष्य अत्यन्त गुप्त रीत से नर हत्या करता है किन्तु वह कभी छिपा नहीं रहता।

देवी सिंह, गङ्गागोविन्द सिंह, गुडलेड और हेष्टिंग्स ने रङ्गपुर दिनाजपुर के अत्याचार को छिपाने के लिये कितनी ही चेष्टा की। किन्तु समय पर सबही प्रकाश हो गये। कारागार वासिनो अनाथा रमणी गणका रोदन शब्द समुद्र पार होकर इङ्गलेन्ड तक पहुंचा। शान्त सुशीला, लज्जावती बङ्ग महिला गण ने अति क्षीणस्वर से कारागार में बैठ कर जैसा क्रन्दन किया था, वह दुर्बल क्रन्दन ध्वनि, वही क्षीण आर्त्तनाद समय पर महात्मा एडमण्ड बर्क की सुगंभीर कंठ ध्वनि से प्रकाशित हो कर जगत भर में व्याप्त हुआ,

करुणा रस परिपूर्ण जीवित भाषा के इतिहास में वही ध्वनि उल्लिखित हो कर भविष्य वंशावली के कर्ण में भी प्रवेश करने लगी।

देवी सिंह के निष्ठुराचरण, देवी सिंह के अत्याचार के कारण प्रजा गण के विद्रोही होने पर कलकत्ता कौंसिल ने इस विद्रोह का मूल कारण अनुसन्धान के लिये पेटरसन साहब को रंगपुर प्रेरण किया। पेटरसन साहब को नियुक्त करने के समय गवर्नर जनरल हेस्टिंग्स ने समझा था, कि पेटरसन पूर्व घटना के सम्बन्ध में कोई उत्पात न करेंगे। विद्रोही होकर प्रजा गण ने जैसा आचरण किया है, उसी के सम्बन्ध में केवल रिपोर्ट करेंगे। किन्तु इस बार हेस्टिंग्स को मनुष्य चुनने के कार्य में बड़ा भ्रम हुआ। पेटरसन को नियुक्त करने से उनको आशानुरूप फल नहीं मिला।

हम पाठक गण के जानने के लिये संक्षेप में इस स्थान पर पेटरसन साहब का परिचय देते हैं।

पेटरसन साहब का पिता अत्यन्त धार्मिक था। पुत्र के भारत गमन की वार्त्ता सुन कर वह अत्यन्त डर गया। उसका बिश्वास था, कि अंगरेज़ भारत

गमन के समय उत्तमाशा अन्तरीप तक पहुंचते ही वह लोग वाईब्ल (धर्म पुस्तक) को समुद्र में फेंक देते हैं, और बम्बई उपकूल में पांव रखने के समय तरवार हाथ में लेकर जहाज़ से उतरते हैं।

इन सम्पूर्ण अंगरेज़ों के बुरे दृष्टान्त से अपने पुत्र की रक्षा करने के अभिप्राय से, बृद्ध पेटरसन ने पुत्र के कोट के छाती के निकटस्थ पौकेट में एक वाईब्ल रख कर, पाकेट का मुख बन्द कर दिया। उसने समझा था, कि भारतवर्ष में पहुंच कर अन्यान्य अंगरेज़ों की भांति हमारा पुत्र भी हुआ तो वाईब्ल का पाठ नहीं करेगा। किन्तु एक वाईब्ल अन्ततः छाती के निकट रहने से हृदय स्थित बिवेक किञ्चित चपा रहेगा, एक दम ही न निकल जायगा।

बृद्ध पेटरसन की यह आशा एक दम ही निष्फल नहीं हुई। उसके पुत्र युवक पेटरसन के छाती के निकट वाईब्ल रहने से बोध होता है कि उसका बिवेक एक बारही बर्फ की भांति नहीं गल गया। वाईब्ल के चांप से बिवेक दृढ़ हो गया।

किन्तु वारेन हेस्टिंग्स ने सोचा, कि गुंडलेड साहब और लार्किन साहब की भांति पेटरसन का

बिवेक भी गल गया है। सुतरां रंगपुर के वर्त्तमान उपद्रव की जांच के लिये पिटरसन को रंगपुर प्रेरण किया।

पिटरसन ने रंगपुर पहुंच कर जांच आरम्भ की। विद्रोही कह कर शेख मुहम्मद मुल्ला, मिरज़ा मुहम्मद अतहर और तिलक चांद प्रभृति ने जिन सम्पूर्ण मनुष्यों को पकड़ लाया था, उनको गुडलैड साहब ने पिटरसन साहब के पास भेज दिया। उसने इन लोगों का इज़हार लेना आरंभ किया।

मुल्ला शेख मुहम्मद ने जिस पिलही रोग ग्रस्त चाण्डालिनी के पुत्र को पकड़ कर लाया था, सब से पहले उसी पर पिटरसन की दृष्टि पड़ी। उसका उदर अत्यन्त स्फीत था। सुतरां, वह, सहज ही में मनुष्य के चक्षु को आकर्षण करता था। इस व्यक्ति का नाम पिटरसन के पूछतेही उसने कहा।

"मैं आपन नाम नाहीं जानत हौं मैं कीट मानुष।"

तब मुहम्मद मुल्ला ने आगे बढ़ कर कहा हुजूर इसका नाम भेरकेशा। पिटरसन ने फिर पूछा "भेरकेशा—टुम युद्ध करता है?"

भेर कैशा। हुजूर यहां मैं नाहीं आवत रहऊं। बरकन्दाज़ ने तब कहिस कि दुफेर को दही चिउड़ा मिलिहै। मेंहूं ने कहा कि दुफेर के दही चिउड़ा मिलिहै तो जैहों, नाहीं तो ना जैहों।

पेटरसन साहब इसकी अवस्था देख कर अवाक ही रहे। पेट की पिलही के भार से मनुष्य चल नहीं सक्ता। यह व्यक्ति युद्ध करने गया था, उसी गुडलैड साहब की भांति योग्य कलेक्टर के भिन्न और कोई बिश्वास नहीं कर सक्ता।

इसके पश्चात मिरज़ा मुहम्मद अतहर के लाये हुए असामियों से पेटरसन ने उनका नाम पूछा। इनमें से एक का नाम चुया पानी, द्वितीय का नाम झड़ुरू, तृतीय का खेरकेट्टु था।

इन तीनों आदमियों ने पेटरसन के निकट आते ही चिल्ला कर कहा।

"हुजूर हम तीनों के माथा पर मुटरी धरा कर जमांदार ले आवा है। हंगामा नहीं करे हई।

पेटरसन ने इन की बात सुन कर इनको छोड़ दिया।

अन्त में तिलक चांद जमादार ने एक अन्धा

और एक लंगड़ा को उपस्थित करके कहा "हुजूर पाटग्राम युद्ध के समय इस मनुष्य के चक्षु नष्ट हुए है। यह बड़ा दुष्ट है, भागने की चेष्टा किया था। तब मैंने खुद इस के पीछे पीछे दौड़ कर इसे पकड़ा था। और इस दूसरे आदमी ने नूरुल मुहम्मद की कन्या से विवाह किया था यह मुख्य बिद्रोही का दामाद है।

तिलक चांद के यह कहते ही अन्धा कह उठा। "धर्मावतार पाटग्राम युद्ध में नहीं गया मेरे सात पुरुषों की भी आंख नहीं थी।"

द्वितीय ने कहा "मैं नूरुल मुहम्मद का दामाद नहीं हूं। मेरे सात पुरुषों ने भी विवाह नहीं किया।"

असामियों की ऐसी अवस्था देख कर पेटरसन साहेब ने इन को भी छोड़ दिया। और सच्चे प्रमाण संग्रह करने के लिये ज़मींदारों को तलब किया। ज़मींदारों में से प्रायः सब ही देश छोड़ कर भाग गये थे। पेटरसन साहेब ने उन को हाज़िर होने के लिये इश्तिहार दिया। किन्तु और कोई ज़मींदार हाज़िर नहीं हुआ। केवल शिवचन्द्र चौधरी हाज़िर

हुए थे। उन्हीं ने पेटरसन साहेब से विद्रोह की प्रकृत अवस्था कहा। पेटरसन के साथ कोई अमला नहीं था इससे शिवचन्द्र का इज़हार उस समय नहीं लिखा गया। पेटरसन ने शिवचन्द्र का इज़हार लिपि-बद्ध करने के लिये उन को गुडलैड साहेब के पास भेजा। गुडलैड साहेब ने उन का इज़हार लिपि बद्ध न करके, उन्हे देबी सिंह के ज़िम्मे कर दिया। देबी-सिंह ने शिवचन्द्र चौधरी के हाथ पांव लोह शृंखल से बांध कर क़ैद में रक्खा। शिवचन्द्र की ऐसी दुर-वस्था देख कर अब एक बालक भी इज़हार देने को हाज़िर नहीं हुआ।

शिवचन्द्र ने पेटरसन से कहा था, कि देबीसिंह ने अधिक जमा तलब करके प्रजा और ज़मींदारों पर घोर अत्याचार किया था। उसी से प्रजागण विद्रोही हुए थे।

पेटरसन साहेब ने तब देबी सिंह से ११८८ और ११८९ साल की जमाबंदी तलब किया। देबी सिंह ने लाचार होकर जमाबंदी दाखिल किया। किन्तु गुडलैड साहब ने इस सब जमा बंदियों की नकल रखने के बहाने, पेटरसन साहब से उन्हे फेर लेकर

देवी सिंह को दिया। देवी सिंह ने इन जमा बंदियों को फिर पेटरसन के पास दाखिल नहीं किया। कलकत्ते में आकर गङ्गागोविन्द के पास उन्हें दाखिल किया। *

इन सम्पूर्ण बाधा विघ्न के द्वारा पेटरसन साहब की अन्त को प्रकृत अवस्था प्रकाश हो गई। पेटरसन ने रिपोर्ट किया कि देवी सिंह और गुडलैड साहब की दुष्टता से विद्रोह हुआ था। इस बात से हेस्टिंग्स और गंगागोविन्द पेटरसन से अत्यन्त असन्तुष्ट हुए; पेटरसन को मिथ्यावादी कहा; और इस विषय में एक नया कमीशन नियुक्त किया।

नया कमीशन नियुक्त होकर रंगपुर आया। उसके निकट पेटरसन को असामी होकर खड़ा होना पड़ा। किन्तु इस कमीशन की जांच पांच छ वर्षों तक समाप्त नहीं हुई। १७७४ से १७८८ साल तक कमीशन का कार्य होता रहा।

सद्विचार की आशा देकर मनुष्यों की आंख में धूल डालने का उपाय करने के लिये ही कमीशन नियुक्त हुआथा। कमीशन मुकर्रर होने ही से मनुष्यों

* Vide note (18) in the appendix.

की आशा का सञ्चार होता है। किन्तु इसका अंतिम फल "बह्वारम्भे लघु क्रिया" अर्थात गरजता है सो बरसता नहीं।" इस कमीशन के अन्तिम परिणाम की बहुत विलम्ब है। अतएव सन १७८४ ई० के पश्चात गंगागोबिन्द प्रभृति उपन्यास में लिखे हुए व्यक्ति गण ने और सम्पूर्ण कार्य किया है। वह आगे के अध्याय में पहले ही लिखा जायगा। पाठक गण पांच वर्षों के पश्चात कमीशन का अन्तिम फल जान सकेंगे।

—※—

त्रिंश अध्याय ।

शेष कुक्रिया ।

रङ्गपुर विद्रोह के दो वर्ष पश्चात् फ़रवरी सन् १७८५ ई० में वारेन हेस्टिंगस् ने स्वदेश की यात्रा की । गङ्गागोबिन्द सिंह हेस्टिंगस् को जहाज़ पर चढ़ाने के लिये उस के साथ जहाज़ में जा पहुंचे । एक दूसरे का मुख देख कर अश्रुपात करने लगे ।

कुछ काल के पश्चात् गङ्गागोबिन्द ने आंखों में आंसू भर कर रोते २ हेस्टिंगस से कुछ भूमि मांगी । बङ्गदेश की सम्पूर्ण भूमि ही हेस्टिंगस की पैतृक सम्पत्ति थी । सुतरां गङ्गागोबिन्द के समान बिश्वास पात्र दास को भूमिदान करना उसने मुख्य कर्त्तव्य समझा, और दिनाजपुर के राजा के जमीदारी के अन्तर्गत सालवारि परगना गङ्गागोबिन्दको दान किया ।

पाठक गण को स्मरण होगा, कि पूर्व में देवीसिंह ने छल कर के गङ्गागोबिन्द को दिनाजपुर के राजा के जमीदारी का कुछ अंश किवाला करा दिया था । ज़मींदारो के जिस अंश सम्बन्ध में वह फ़रेवी किवाला लिखा हुआ था, उसी अंश को अब वारेन हेस्टिंगस

ने गङ्गागोबिन्द को दान किया। देवीसिंह और गङ्गागोबिन्द सिंह के पूर्बका फरेब और छल का अब वारेन हेस्टिंग्स ने अनुमोदन पूर्वक गंगागोबिंद को सालवारि परगना के मालका स्वत्व प्रदान किया गंगागोबिन्द सिंह हेस्टिंग्स के प्रसाद से दिनाजपुर के राजाकी ज़मींदारी के एक अंश का मालिक हुआ।

किन्तु हेस्टिंग्स के बंगदेश परित्याग करने पर लार्ड कर्नवालिस भारतवर्ष के गवर्नर जेनरल हो कर आये। लार्ड कर्नवालिस के समय में दिनाजपुर के राजा की ओर से सालिवारि परगना के निमित्त गंगागोबिन्द के बिरुद्ध नालिश की गई। कर्नवालिस ने हेस्टिंग्स का भूमिदान नामंजूर कर के सालवारि परगना दिनाजपुर के राजा को लौटा दिया।

लार्ड कर्नवालिस के समय में रङ्गपुर दिनाजपुरके बिद्रोह सम्बन्ध में नाना प्रकार की समालोचना आरम्भ हुई। इस बिद्रोहके कारणके अनुसन्धान में प्रवृत्त हो कर वह चिरस्थाई बन्दोबस्तकी आवश्यकता अनुभव कर सके।

इस में कोई सन्देह नहीं कि दिनाजपुर का बिद्रोहही लार्डकर्नवालिस के चिरस्थायी बन्दोवस्त का एक मात्र मूल कारण है। बङ्गबासी गण को

नूरुल मुहम्मद और दया राम के शोणित के मूल्य के बदले में यह अधिकार प्राप्त हुआ है, बोध होता है कि यह कोई भी अस्वीकार नहीं करेगा। इस्तमरारी बन्दोबस्त द्वारा बङ्गदेश का बड़ा उपकार हुआ है। इस्तमरारी बन्दोबस्तही ने अङ्गरेज़ राज्य को दृढ़ीभूत किया है। किन्तु नूरुल मुहम्मद और दयाराम प्राण परित्याग न करते तो कभी बङ्गदेश में इस्तमरारी बन्दोबस्त न होता।

* * * *

प्रेमानन्द गोस्वामी पाटग्राम कलङ्क के पश्चात् मालदह में जाकर स्त्री और कमला देवी के साथ वास करने लगे। इस ओर लक्ष्मण सिंह कमला देवी के पुत्र चैत्रनाथ को सङ्ग लेकर बङ्गदेश में आ पहुंचे।

लक्ष्मण ने समझा था, कि कमला देवी इस समय दिनाजपुरमें राम सिंहके घरही में है। इसीसे चैत्रनाथ को सङ्ग लेकर वह पहले दिनाजपुर को गये। किन्तु वहां कमला देवी से उनकी भेंट नहीं हुई। तब वह और उसके भ्राता रामसिंह ने परिवार समेत चैत्रनाथ को संग लेकर मालदह की ओर यात्रा किया। दोही दिन में वह लोग मालदह में आ पहुंचे।

एकत्रिंश अध्याय।

पुत्र मुख दर्शन।

प्रेमानन्द, सत्यवती और कमलादेवी अब रामानन्द गोस्वामी के पैतृक गृह में निवास करते हैं! कमलादेवी लक्ष्मण की आशापथ निहार रही हैं। अब सर्बदा ये लोग प्रायः लक्ष्मणही के बिषय में कथा वार्त्ता करते हैं। कब लक्ष्मण लौटेंगे, लक्ष्मण के समान सत्पुरुष इस संसार में और कोई नहीं हैं, सर्बदा ही इन लोगों में इन सब बिषयों की आलोचना होने लगी।

एक दिन प्रेमानन्द ने कमला देवी को सम्बोधन कर के कहा मा! लक्ष्मण ने अपना नाम सार्थक किया है। जब दशरथपुत्र लक्ष्मण राम के संग बन जाते थे, तब अयोध्यावासी सम्पूर्ण नर नारी लक्ष्मण की ओर अंगुली दिखाकर कहने लगे—

एकः सत्पुरुषोलोके लक्ष्मणः सह सीतया।
योऽनु गच्छति काकुत्स्थं रामं परिचरन् बने॥

कमला देवी ने कहा पुत्र! इस जीवन में मैं लक्ष्मण का ऋण कभी परिशोध न कर सकूंगी।

मैं प्रति दिन लक्ष्मण की मंगल कामना करके शिव पूजा करती हूं। मैं सदैव महादेव के निकट प्रार्थना करती हूं कि आप लक्ष्मण को सुखी कीजिये।

प्रेमानन्द ने किञ्चित हंस कर कहा "मा! लक्ष्मण सर्वदाही कहते हैं कि आप के सुखी होने से वह सुख बोध करते हैं। तो लक्ष्मण को सुखी कीजिये यह प्रार्थना न कर के मुझे सुखी करो यह कहने से भी वही एक बातही होती है।

कमला देवी ने कहा पुत्र! क्या आश्चर्य्य है!! मेरे द्वारा तो लक्ष्मण का कभी कोई उपकार नहीं हुआ। किन्तु लक्ष्मण मुझे सुखी करने के लिये प्राण परित्याग करने में भी कुंठित नहीं होता है।

प्रेमानन्द। मा तुम अपने को नहीं चीन्ह सकती। परमा साध्वी रमणी गण अपने अपने जीवन के पवित्रता के दृष्टान्त द्वारा जगत का जैसा उपकार करती हैं, वैसा अर्थ, सम्पत्ति ऐश्वर्य्य किसी के द्वारा जगत का उपकार नहीं होता है। साध्वी गण के मृत्यु के पश्चात् भी उन से जगत् का उपकार होता है। जनक तनया वैदेही युग युगान्तर हुआ संसार त्याग कर गई हैं। किन्तु

आज भी उनका सा दृष्टान्त रमणियों को सत्पथ में चलाता है।

ये दोनों परस्पर ऐसीही कथा वार्ता करते हैं। सत्यवती निकट बैठ कर इनकी कथा वार्त्ता सुनती है। इस समय जगा ने गृह में प्रवेश करके कहा, कि दिनाजपुर के उसी जेल के जमादार रामसिंह दो स्त्रियों को और दूसरे दो पुरुषों को सङ्ग लेकर हमारे घर आये हैं।

रामसिंह का समाचार सुन कर प्रेमानन्द तुरंत घर से बाहर चले। कमला देवी भी उनके पीछे २ चलीं। कुछ दूर जातेही प्रेमानन्द ने देखा कि रामसिंह, लक्ष्मण सिंह, रामसिंह की स्त्री और लक्ष्मण सिंह की स्त्री और एक युवक उनके घर आये हैं। युवक को देख कर प्रेमानन्द ने समझ लिया कि यही कमला देवी के पुत्र होंगे। किन्तु कमला देवीने प्रेमानन्द के पीछे से उस युवक के मुख की आकृति देखतेही बछड़े वाली गौ के समान दौड़ कर, दोनों बाहु पसार कर, लक्ष्मण और उस युवक का गला बल से पकड़ लिया।

कमला देवी की एक बाहु ने लक्ष्मण के गले

को परिवेष्टन किया है, और दूसरी बाहु उसके पुत्र के गले में स्थापित है। दोनों बाहु द्वारा दोनों का मस्तक पागलिनी के समान अपनी छाती की ओर खींचती है। उनका पुत्र चेतनाथ तब "मैं तुम्हारा चिर अपराधी, कृतघ्न सन्तान हूं" यह कह कर मूर्च्छित हो कर जननी के पदतल में गिर गया।

इस समय इन लोगों में से प्रत्येक के हृदय में जो भाव उत्पन्न हुआ था, वह वाक्यों द्वारा कोई भी प्रकाश नहीं कर सकता। सहृदय पाठक, सहृदया पाठिका, कल्पना से अपने को उसी अवस्था में समझने से ही इनके हृदयके भाव को जान सकेंगे।

चेतनाथ के मूर्च्छित हो कर गिरने पर प्रेमानन्द ने उनको धर कर उठा लिया। वह चैतन्ययुक्त होने पर बारम्बार अपना अनादर करके कहने लगे, "मा मैं तुम्हारा कृतघ्न सन्तान हू तुम सत्यही सत्य कुपुत्र को गर्भ में धारण किये थी। मैं बारह वर्षों से तुमको परित्याग करके विदेश में था। मेरी मृत्यु होने सेही अच्छा होता।"

किन्तु कमला देवी के मुख में बात नहीं है। उत्साहपूर्ण हृदय के वेग से उसका कण्ठावरोध हो

गया है। सैंकड़ो चेष्टा कर के भी वह कुछ भी स्पष्ट न बोल सकी। वह क्या कहती है कोई भी नहीं समझ सका। केवल "मेरा पुत्र" "मेरा पुत्र" यही शब्द सुना गया।

वह पूर्ण बल से लक्ष्मण का और पुत्र का मस्तक अपनी छाती की ओर खींचने लगी। दीर्घाकार वीरपुरुष लक्ष्मण पालित सिंह के समान, कमला देवी जिस ओर उसका गला धर कर खींचती है, उसी ओर गले को घुमाने लगा। प्रायः आधे घन्टे तक सब एकही तरह खड़े रहे। कोई नहीं बोल सकता, सबही अपने को भूल गये हैं।

सत्यवती भी इन लोगों का विलम्ब देखकर यहां आई। राम सिंह सत्यवती को देख कर विस्मय पूर्ण नेत्र से उसके मुखकी ओर बारम्बार दृष्टिपात करने लगा।

कुछ काल के पश्चात् प्रेमानन्द सब को घर में ले गये। सत्यवती और कमला देवी ने राम सिंह की स्त्री और लक्ष्मण की स्त्री का अत्यन्त स्नेह से आदर सत्कार किया। ये लोग प्रायः एक मास से भी अधिक तक परम सुख से यहां रहे।

एक मास से कुछ अधिक काल के पश्चात चेतनाथ ने कहा बङ्गदेश में रहने की मेरी इच्छा नहीं है। लक्ष्मण की भी पञ्जाब जाने के अनन्तर पञ्जाब में बास करने की इच्छा हो गई है। राम सिंह को किसी विषय में मतामत देने की सामर्थ्य नहीं। दो एक मीठी बात कह कर ही जिस ओर चाहो, उसे फिरा सकते हैं। चेतनाथ के कहने पर राम सिंह लक्ष्मण सिंह सबही ने पञ्जाब जाना स्थिर किया। किन्तु प्रेमानन्द को छोड़ कर जाने में किसी की इच्छा नहीं। ये लोग प्रेमानन्द को भी परिवार समेत पञ्जाब जानेके लिये अनुरोध करने लगे।

राम सिंह यहां आने के अनन्तर सर्वदाही विस्मय भरे नेत्र से सत्यवती की ओर देखा करते।

प्रेमानन्द ने उनके मनका भाव समझ कर एक दिन हंसते २ राम सिंह से कहा।

"आपने उस भृत्य नानकूका कोई पता पाया है?

सत्यवती उस समय वहां उपस्थित थी। वह हंसने लगी।

राम सिंह ने कहा "नहीं—नानकू कहां चला गया, उसकी कोई खबर नहीं मिली।

प्रेमानन्द ने फिर हंस कर सत्यवती की ओर अंगुली दिखाकर कहा "यह नानकू की बहिन के सी देख पड़ती है न।"

राम सिंह ने कहा। "हां ठीक नानकू के मुख के समान इस का मुख है।

प्रेमानन्द। क्या नानकू को आपने पालित पुत्र रखने के लिये स्थिर किया था? यह यदि नानकू हो तो इसे पालित कन्या कीजियेगा?

राम सिंह ने कोई उत्तर नहीं दिया। पश्चात् प्रेमानन्द ने पूरा वृतान्त उससे कह दिया। राम सिंह ने तब सत्यवती से कहा पुत्री! आज से तुम मेरी कन्या हुई। किन्तु मैं तुमको नानकूही कह कर पुकारूंगा।

राम सिंह, लक्ष्मण सिंह और चन्द्रनाथ के अनुरोध से प्रेमानन्द ने भी बङ्गदेश परित्याग कर के पंजाब जाना स्थिर किया। किन्तु उसने इन से कहा, कि रङ्गपुर के इस कमीशन का फल न देख कर मैं बङ्गदेश को नहीं छोड़ूंगा। मैंने बङ्गदेश का अत्याचार निवारण के लिये २५ वर्ष से अनेक चेष्टा की है। इस लिये बङ्ग की भावी अवस्था

क्या होगी इस के जानने के लिये मैं विशेष उत्सुक हुआ हूं। इसके सिवाय बिद्रोहियों में से दो एक जन पकड़े गए थे, उनके लिये कैसी दण्ड की आज्ञा होती है उसे निवारण की चेष्टा करेंगे।

राम सिंह ने उनकी बात सुन कर कहा "क्यों तुम रङ्गपुर के मनुष्यों के उद्धार की चेष्टा करना चाहते हो। बङ्गाली जात कूकुर—तुम जिन सब ज़मींदारों के उपकार के लिये प्राण देने गये थे, अब देखो कमीशन के निकट वह लोग कैसी मिथ्या साक्षी देते हैं। तुम को भी पकड़ा देने के लिये मिथ्या बात कहते हैं।".

प्रेमानन्द यह बात सुन कर आंखों में जल भर कर कहने लगे—

"आप व्यर्थ इन बंगालियों की निन्दा करते हैं। मैं स्वीकार करता हूं बंगाली जात सत्य ही सत्य कूकुर। कूकुर न होते तो इन लोगों की ऐसी दुर्दशा क्यों होती। किन्तु किसने इनको कूकुर किया है? किसने इनके हृदय मन मनुष्यात्मा से शून्य कर इनको नीच पशु जीवन दिया है? यह लोग तो मातृ गर्भ से स्वान स्वरूप में जन्मते नहीं हैं।

राम सिंह। किस ने इन को स्वान किया है ?

प्रेमानन्द। देश प्रचलित शासन प्रणाली ही प्रजाओं के चरित्र का गढ़ती है। देश प्रचलित राजनैतिक अत्याचार ही साधारण प्रजा का स्वान कर डालता है। आप देखते हैं न, देवी सिंह, राम नाथ दास, गङ्गा गोविन्द सिंह इत्यादि के समान अति नीच मनुष्य को ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी उच्च उच्च पद देती है। जो कोई मिथ्या प्रवञ्चना तोषामोद वाक्य का प्रयोग करता है, वही शासन कर्त्ताओं का प्रिय पात्र होता है। सुतरां साधारण मनुष्य मिथ्या प्रवञ्चना मूलक व्यवहार को विशेष लाभ प्रद समझ कर उसी पथ का अवलम्बन करते हैं। किन्तु आप कूकुर कह कर जिन से घृणा करते हैं, इन लोगों में मनुष्यात्मा प्रयोग की जा सक्ती है। यदि पाट ग्राम की अवस्था आप अपनी आंख से देखते तो इन को कभी कूकुर न कहते। सब आदमियों से मैं ने भाग कर प्राण रक्षा करने के लिये कहा। किन्तु एक भी मुझे छोड़ कर नहीं भागा मेरे चहुं ओर वह भीत के तुल्य ही कर मुझे घेरे रहे। सबों के मुख पर केवल यही बात थी—

"हम प्राण परित्याग करके प्रेमानन्द की जीवन रक्षा करेंगे। प्रेमानन्द के सिवाय और कौन प्राण त्याग करके हमारे स्त्री कन्या की धर्म्म रक्षा करेगा ?"

प्रेमानन्द की बात सुन कर राम सिंह ने फिर कुछ भी नहीं कहा। किन्तु पाट ग्राम की अवस्था स्मरण होते ही प्रेमानन्द के दोनों कपोलों पर से चक्षु जल बह कर गिरने लगा।

—※—

द्वात्रिंश अध्याय।

उपसंहार।

फ़रवरी सन् १७८८ ई० में रङ्गपुर के कमीशन की जांच समाप्त हुई। कई एक बङ्ग कुलाङ्गारों ने देवी सिंह के भय से, और कई एक कापुरुष ज़मींदारों ने देवी सिंह का अनुग्रह प्राप्त करने के उद्देश्य से, मिथ्या साची दिया उन्हीं ने कहा देवी सिंह इन सब अत्याचारों के विषय में कुछ भी नहीं जानते। केवल हर राम होने अत्याचार किया है।

इन सब बङ्ग कुलाङ्गारों ने पिटरसन साहेब के जांच के समय में, देवी सिंह ने स्वयं जितने अत्याचार किये थे,, उन सब को प्रकाश किया था। सुतरां पिटरसन साहेब अब एक प्रकार से मिथ्यावादी हो गये।

कमिश्नर गण ने निश्चय किया, कि देवी सिंह और गुडलेड साहेब के विरुद्ध भर पूर आईनी प्रमाण नहीं है। किन्तु विलायती प्रणाली के अनुसार विचार न करने से, देवी सिंह और गुडलेड के विरुद्ध भी अपराध साबित होता।

देवी सिंह को छुट्टी मिली। देवी सिंह के पक्ष के कई एक मनुष्य बिद्रोह के समय ही मारे गये थे केवल हर राम इत्यादि कई एक मनुष्य जीवित थे। हर राम को एक वर्ष के कारागार की आज्ञा हुई * और प्रजाओं में से पांच मनुष्य बिद्रोही समझे गये। लार्ड कार्नवालिस ने इन को बङ्गदेश से निकालने की आज्ञा दिया। लार्ड कार्नवालिस के शासन कार्य्य में यही एक गुरुतर कलङ्क है। इन को बिद्रोही स्वीकार करने से भी, इन की स्त्री कन्याओं पर जैसा अत्याचार हुआ था, उस से इन को दण्ड देना किसी प्रकार न्याय सङ्गत नहीं था।

प्रेमानन्द ने रङ्गपुर जाकर इन पांचों जनों को ढाढ़स देकर कहा "तुम्हे कोई भय नहीं। बङ्ग देश से निकाले जाने पर तुम लोग पंजाब को चले जाव। मैं तुम्हारे स्त्री पुत्र को सङ्ग लेकर पंजाब में तुम्हारे साथ एकत्र रहूंगा।"

प्रेमानन्द की इस बात को सुन कर उन को विशेष आनन्द हुआ। और कई एक दिन पीछे वह बङ्गदेश से निकाले गये।

---

* Vide note (21) in the appendix.

कमीशन के अन्तिम काल में प्रेमानन्द ने दो तीन वार कार्नवालिस से साक्षात् किया था। लार्ड कार्नवालिस से वार्त्तालाप करके समझ सके कि केवल रङ्गपुर के विद्रोह ही के कारण वह चिरस्थायी बन्दोबस्त के पक्षपाती हुए हैं। रङ्गपुर के विद्रोह के कारण देश का और भी एक उपकार हुआ। ब्राह्मण और देवता आदि की निष्कर ज़मीन का स्वत्व अनुसन्धान के लिये नियम के साथ बाजे जामिन शिरस्ता संस्थापित हुआ। रङ्गपुर के विद्रोह से किञ्चित् पूर्व बाजे-जामिन शिरस्ता के संस्थापन का प्रस्ताव हुआ था। किन्तु इसी विद्रोह के कारण विशेष आग्रह से लार्ड का कार्नवालिस ने बाजे-जामिन शिरस्ता नियम के साथ संस्थापन किया।

प्रेमानन्द जन्म भर के लिये बंगदेश परित्याग करके, कमला देवी के पुत्र चेतनाथ के संग पञ्जाब को चले जायेंगे, यह बात सर्वत्र फैल गई। प्रेमानन्द के अनेकानेक आत्मीय कुटुम्ब आकर उनको पञ्जाब जाने से निषेध करने लगे। उनके चचेरे भाई सच्चिदानन्द गोस्वामी अपने ब्रह्मत्र जमीन के मुक़द्दमे की तदबीर करने के लिये इस समय कल-

कत्ता में थे। उन्होंने प्रेमानन्द के संग एक ही टोल में शास्त्राध्ययन किया था। प्रेमानन्द को पञ्जाब जाने के लिये निषेध कर के उन्हों ने कलकत्ता से एक सुदीर्घ पत्र लिखा। प्रेमानन्द ने पञ्जाब यात्रा करने के दो दिन पूर्ब सच्चिदानन्द के पत्र के उत्तर में पत्र लिखा है उसी को यहां उद्धृत करते हैं।

परम कल्याणवर श्रीमत् सच्चिदानन्द गोस्वामी परम कल्याण वरेषु।

मैं शुभ आशीर्बाद के साथ तुम्हारे पत्र का उत्तर देता हूं, मैंने सत्यही बंग देश परित्याग करना विचारा है। मैं निश्चय ही तुम से कहता हूं कि बंग देश का अत्याचार और अराजकता शीघ्र निवृत्त न होगा। बरन कालान्तर में यह अत्याचारानल क्रमशः और प्रज्वलित होगा। तुममें यदि बिचार शक्ति है तो बर्त्तमान अवस्था देख कर भविष्यत में क्या होगा उसे अनायास ही जान सक्ते हो। देखो तो इस अत्याचार का किस प्रकार निवारण हो सक्ता है। एक ओर कई एक अर्थ लोभी बणिक केवल अर्थ संग्रह करने के उद्देश्य ही से इस देश में बास करते

हैं। दूसरी ओर अत्यन्त तेज हीन परस्पर की सहानुभूति से शून्य कापुरुष बंगाली जाति है। इन दोनों श्रेणी के मनुष्यों के परस्पर सम्मिलन से जैसी अवस्था हो सक्ती है, वैसी ही होती है। जल और चीनी मिश्रित होने से सुमिष्ट शरबत प्रस्तुत होता है। किन्तु जल में कीचड़ मिलने से शरबत नहीं होता है। इसी प्रकार इन बलवान अंगरेज़ बणिकों के साथ और कोई तेजस्वी और बलवान जाति का सम्मिलन होने से परस्पर में बन्धुत्व स्थापित होता, परस्पर का गुण परस्पर ग्रहण करने में समर्थ होते। किन्तु निस्तेज और नीचाशय बंगाली जाति के ऊपर सहज ही अंगरेज़ों की घृणा का उदय हो सक्ता है।

"बंगाली जाति की नीच प्रकृति और निस्तेज समझ कर ही अंगरेज़ गण अधिक अर्थ सञ्चय करने के निमित्त देवीसिंह, गंगागोबिन्द सिंह और रामनाथ दास इत्यादि के समान नर पिशाचों को उच्च पद प्रदान करते हैं। ये सब नीचाशय बंगाली अंगरेज़ों का आश्रय पाकर अपने देशीय मनुष्यों पर घोर अत्याचार करते हैं। ऐसी अवस्था में देश में अच्छे

मनुष्य उत्पन्न भी नहीं हो सक्ते। मनुष्य उच्च पद चाहता है। किन्तु अन्य देशमें सच्चरित्र मनुष्य उच्चपद लाभ करता है। हमारे देश में देवी सिंह, गंगा-गोविन्द सिंह के समान मनुष्य ही उच्च पद पाते हैं। सुतरां देश के सब लोग और आगामी वंशावली तक देवी सिंह और गंगागोविन्द सिंह के असत् दृष्टान्त का अनुसरण करेंगे।

"बंग देश की दुरवस्था के विषय में मैंने अनेक चिन्ता किया है। सन १७६१ ई० में जब मालदह में ग्रे साहब और राम नाथ दास ने प्रथम अत्याचार करना आरम्भ किया, तब से आज तीस वर्ष हुए इन सब विषयों को चिन्ता करता हूं। पूर्व्व ही सोचा था, कि एक न एक दिन इस अत्याचार का निवारण कर सकूंगा। अब सब प्रकार से निराश हो गया हूं। किन्तु यह न समझना, कि निराश होने पर भी चेष्टा करना छोड़ दूंगा।

"भाई बंगालियों को एक रोग नहीं है। कई प्रकार के तंगड़े रोगोंने फैल कर बंगालियोंके जीवन में प्रवेश किया है। केवल ज्वर होने से, अनायास ही एक प्रकार की औषध का प्रयोग करने ही से

वह ज्वर आराम होता है । किन्तु ज्वर, काश, आमाशय, प्लीहा और यकृत् ये पांच रोग जब किसी के शरीर में प्रवेश करते हैं, तब औषध की व्यवस्था नहीं चलती। एक रोग की औषधि से अन्य रोग वृद्धि करते हैं।

"बंगाली जाति यदि कापुरुषता के कारण केवल राजनैतिक अत्याचार से पीड़ित होते, तो समभाव की चेष्टा द्वारा राजनैतिक अधिकार के प्राप्ति के लिये यत्न करता। किन्तु इनकी सामाजिक अवस्था भी वैसी ही घृणित है। जाति भेद, स्त्रियों का परदा में रहना, बाल्य विवाह, बहु विवाह, कुलीनता प्रथा और सहमरण इत्यादि कुत्सित देशाचार इनकी क्रमशः अवनत अवस्था से कुछ कुछ और अवनत अवस्था में चलाते हैं।

"तुम कदाचित सोचोगे कि मैं गत वर्ष तुम्हारे संग कलकत्ता में रहने के समय में, पादरी साहबों से समय समय पर वार्त्तालाप करता था, उसी से, हमारा कृस्तान मत हुआ है। किन्तु वह नहीं है। पादरियों से वार्त्तालाप करने के बहुत पूर्व में, जब लक्ष्मण सिंह के संग काशी, वृन्दावन, प्रयाग,

अयोध्या और दिल्ली आदि प्रदेशों में भ्रमण किया, तब ही से मेरे ज्ञान चक्षु अनेक विषय में खुले हैं। सामाजिक कई एक कुत्सित आचरणों पर दृष्टि पड़ी है।

लक्ष्मण के संग कमला देवी के पुत्र के अनुसन्धान के लिये जंगल जंगल, पहाड़ पहाड़ में भ्रमण किया है। निर्जन में एक एक जंगल में बैठ कर, एक एक पहाड़ के ऊपर बैठ कर निरंतर चिन्ता किया है। एक एक कर क्रमशः ग्यारह वर्षों तक चिन्ता किया है। तब मेरे मन में सदैव यही प्रश्न उदय होता था, कि क्यों बँगाली जाति का किसी जाति में जीवन नहीं है? क्यों बंगाली निस्तेज हैं? क्यों बंगाली ऐसे स्वार्थपर हैं? क्यों बंगाली इतने नीचाशय हैं?

"इन सब प्रश्नों की बारम्बार चिन्ता करके स्वयं भी बिचार किया है। इस देश का यदि एकाध असली इतिहास रहता, तो तुम भी किञ्चत चिन्ता करके, इन सब प्रश्नों का बिचार करने में समर्थ होते।

"भाई हमारे भारतवर्ष के जिन सब मनुष्यों में बीरत्व, शूरत्व, तेज और मनुष्यत्व था, प्रायः उन

सबों ने ही मुसलमानों के संग युद्ध कर के संग्राम क्षेत्र में प्राण बिसर्जन किया। किन्तु युद्ध क्षेत्र से जिन्हों ने भाग कर प्राण रक्षा किया था, हम उन्हीं के सन्तान हैं। भगोड़ों के बंश में होने के कारण हम ऐसे कापुरुष हो गये हैं। किन्तु इस कापुरुषता की कालान्तर में क्रमशः वृद्धि होती है।

"सिराज के सिंहासनच्युत होने पर इन्ही तीस बर्षों से जो घोर अत्याचार हो रहा है, विश्वव्यापी हल चल मच रहा है, उससे वङ्गालियों की कापुरुषता शत गुण बृद्धि पाती है। देश के सम्पूर्ण नीच प्रकृति के मनुष्य जन्म से हमारे पिता पितामह के गुलाम थे, वही अंगरेज़ों के बाणिज्य कोठी के प्यादा किम्बा गुमाश्ता होकर इन्हीं बीस तीस बर्षों में अतुल ऐश्वर्य्य सञ्चय करके अब देश के प्रधान मनुष्य हो गये हैं, बङ्ग समाज के नायक हुए हैं। किन्तु इनके पूर्व पुरुष गण हमारे पूर्व पुरुष गण से भी शत गुण कापुरुष थे। हमारे पूर्व पुरुष गण संग्राम क्षेत्र में एक बार गये थे। इनके पूर्व पुरुष गण ने संग्राम क्षेत्र का कभी दर्शन भी नहीं किया। इस से बंग समाज के वर्त्तमान नायक गण कुछ अधिक कापुरुष हो सके हैं।

"तुम्हारे संग टोल में जब अध्ययन करता था, तब कई बार तुम से कहा था, कि हमारे शास्त्र के समान और शास्त्र नहीं हैं। किन्तु देश भ्रमण करने पर हमारा वह कुसंस्कार दूर हुआ है। यदि हमारे शास्त्र में सृष्टि का सार पदार्थ अधिक रहता, तो बंगालियों की ऐसी दुर्दशा क्यों होती ?

"तुम्हे स्मरण होगा, कि मेरे पिता ने मुझे म्लेच्छ भाषा नहीं पढ़ने दिया इसी से वाल्य काल में मैं पारसी भाषा नहीं पढ़ सका। किन्तु तुम्हे सुनने से आश्चर्य होगा, कि देश भ्रमण काल में जब दो वर्ष तक अयोध्या में था, तब एक मुसलमान से मैं ने पारसी भाषा सीखा था। मुसलमानों को म्लेच्छ कह कर हम घृणा करते हैं, किन्तु वह भी कई विषयों में हमारी अपेक्षा श्रेष्ट हैं। मुसलमानों में सृष्टि का इतिहास लिखने की प्रथा दीर्घकाल से प्रचलित है। हम अपने को आर्य्य आर्य्य कह कर कितने ही क्यों न उछले, हमारे देश का एक भी इतिहास नहीं है। वस्तुतः मुसलमान गण हमारी अपेक्षा श्रेष्ठत्व लाभ न करने से, कभी हम लोगों को पराजित करने में समर्थ न होते।

"जिस जाति के मनुष्यों का इतिहास नहीं, उन का जातीय जीवन कभी था, यह बोध नहीं होता।

"मैं और एक विषय तुम से कहता हूं तुम चाहे मेरे पत्र को पढ़ कर चौंक उठोगे। बंगाली जाति में इतनी भीरुता है, उसका मूल कारण नारियों का पर्दा में रहना है जिससे सन्तान को निश्चय ही माता की प्रकृति प्राप्ति होगी। किन्तु पर्दा के भीतर रहने वाली भीरु रमणियों के गर्भ से कभी बीर का जन्म नहीं हो सक्ता।

"तुमने अपने पत्रमें मेरा बहुत अनादर किया है, मैं ने व्यर्थ रंगपुर की प्रजाओं को बिद्रोही होने के लिये परामर्श देकर, अत्यन्त कुकार्य्य किया है किन्तु भाई तुम बड़े निर्बोध हो। तुम ने जिस न्याय और दर्शन को अध्ययन किया है, वह सब निरर्थक श्रम-मात्र है। कार्य्य कारण का परस्पर संबंध तुम कुछ भी नहीं समझ सक्ते हो।

"रंगपुर के दयाराम और नूरुल मुहम्मद ने प्राण परित्याग किया है इसी से इस्तमरारी बन्दोवस्त का प्रस्ताव हुआ है। और निष्कर देवत्र ब्रह्मत्र ज़मीन का स्वत्व अनुसन्धान के लिये बाजे जामिन

सिरिश्ता संस्थापित हुआ है। यदि लार्ड कार्नवालिस का यह प्रस्ताव विलायत में मंजूर होता है, तो देश के भूम्याधिकारियों को दयाराम और नूरलमुहम्मद के शोणित के मूल्य में यह अधिकार प्राप्त हुआ।

"भाई एक बात हठात् स्मरण हुई। कृस्तान पादरी गण ने कहा है, कि खृष्ट के रक्त से जगत उद्धार हुआ है। खृष्ट ने प्राण विसर्जन करके ही मानव मण्डली के उद्धार का उपाय कर रक्खा है। अतएव प्राण विसर्जन न करने से कोई जगत का मंगल साधन नहीं कर सक्ता। कृस्तान पादरियों की यही बात अत्यन्त सार गर्भित बोध होती है।

"दयाराम, नूरलमुहम्मद और दूसरे कई एक मनुष्यों के प्राण विसर्जन न करने से; किम्वा रंगपुर के इस विद्रोह के न होने से, लार्ड कार्नवालिस चिरस्थायी बन्दोबस्त करने के इतने पक्षपाती न होते। फ्रांसिस फिलिप ने तो बीस वर्ष पहले चिरस्थायी बन्दोबस्त करने का प्रस्ताव किया था। किन्तु तब वह प्रस्ताव क्यों न मंजूर किया गया? भाई कृस्तान पादरियों के सब कथन को मेरा कहना न समझना।

"तुम को इस स्थान में और एक विषय में सावधान किये देता हूं। आज कल हमारे देश में केवल कृष्ण चरित्र की छटा को ही देख सकते हैं। भाई तुम कृष्ण चरित्र को छोड़ कर बरं खीष्ट चरित्र को पाठ करो। कृष्ण चरित्र को अनेक बार पाठ करने से उसमें क्या देख सकोगे? और क्या देखोगे। दुग्ध फेन निभ शय्या, चार पांच गोपिका। अस्त्र शस्त्र में गौओं को ताड़ना देने के लिये लाठी और एक बंशी। किन्तु खीष्ट के चरित्र में कई महत् व्यापार देख सकोगे। निःशंक हृदय से जगत के मंगल के लिये प्राण परित्याग करना, शत्रु के लिये ईश्वर से प्रार्थना करना और केवल ध्वनि निकालना—"पिता की इच्छा पूर्ण हुई हमारी इच्छा नहीं है।" (Father let Thy will be done and not mine).

"तुमने लिखा है कि बाजे जामिन सरिश्ता और विविध विचार के लिये अदालत स्थापित होने से देश का अत्यन्त मंगल हुआ है; किन्तु मैं ऐसा नहीं सोचता। अंगरेज़ी विचार प्रणाली इस देश में चलने से जाल, प्रवञ्चना और मिथ्या व्यवहार

क्रमशः वृद्धि होने लगेगा। हमारे देश में पहले कोई मकर जाल करना नहीं जानता था। मुंगेर के कलक्टर बेटमैन साहब ने इस देश के मनुष्यों को पहले मकर जाल करने की शिक्षा दिया है। इन सब ब्रह्मत्र जमीन के मालकों में से किसी के भी घर में कोई दलील नहीं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्मचारी दलील न दिखाने से ब्रह्मत्र नहीं छोड़ देवेंगे। सुतरां बाध्य होकर मनुष्य जाल दलील तैयार करना सीखेंगे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के मनुष्य बात बात पर साक्षी तलब करते हैं, सुतरां बाध्य होकर मनुष्य मिथ्या साक्षी उपस्थित करेंगे। मेरे पिता ने रानी भवानी को पत्र लिख दिया था, उस में केवल "धर्म साक्षी" यही बात लिखी थी। किन्तु विलायती प्रणाली के अनुसार तीन मनुष्य साक्षी के लिये आवश्यक होते हैं।

"तुम्हारे पत्र के शेष भाग को पढ़ने पर मैं अब हास्य सम्बरण नहीं कर सक्ता। समझता हूं कि तुम सत्यही पागल हो गये हो। तुम ने लिखा है कि लार्ड कार्नवालिस ने मुझ पर विशेष अनुग्रह

किया। मेरे चचेरे भाई कह कर परिचय देकर तुमने उनसे साक्षात लाभ किया है। अतएव मैं इस सुयोग में चेष्टा करने से कदाचित राय बहादुर या राजा बहादुर की उपाधि पा सक्ता हूं।

"भाई मुझे बोध नहीं होता है, कि कोई बुद्धिमान या कोई भले मनुष्य का सन्तान ईस्ट इण्डिया कम्पनी के दिये राजा बहादुर या राय बहादुर की उपाधि पाने के निमित्त कभी आग्रह प्रकाश करेंगे।

"कासिमबाज़ार के साइक साहब के नौकर का पुत्र सुनार, किम्बा ग्रे साहब के नौकर का पुत्र कुलीन अहीर, अथवा बारवेल साहब के आदमियों में से एक का पुत्र तेली है—इसी श्रेणी के मनुष्य ही राय बहादुर अथवा राजा बहादुर की उपाधि के लिये लालसा कर सक्ते हैं। इनके पिता पितामहों ने अंगरेज़ों की बाणिज्य कोठी का कार्य्य करके अनेक रुपया सञ्चय किया है। किन्तु यह लोग अब तक भद्र समाज में प्रतिष्ठित नहीं गिने जाते हैं। सुतरां ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्मचारियों के अनुरोध से किसी साधारण हितकर कार्य्य में दस बीस हज़ार

रुपया देकर, एकाध शब्द राजा बहादुर या राय बहादुर का पाने से भद्र समाज में प्रवेश कर सकोगी।

"क्या तुम नहीं समझ सकते, कि मैं ऐसा कुकार्य्य कर के अपने पितामह प्रपितामह के नाम में धब्बा लगाना नहीं चाहता हूं परमानन्द गोस्वामी का प्रपौत्र—अद्वैतानन्द गोस्वामी का पौत्र—रामानन्द गोस्वामी का पुत्र—मैं प्रेमानन्द गोस्वामी—इस देश मे मुझे कौन नहीं चीन्हता? तुम क्या नहीं जानती कि जब छिन्न मलिन वस्त्र पहन कर कंगालिनी के वेश में मेरी स्त्री, रानी भवानी के घर गई थी, तब रानी भवानी ने उसे स्नेह से और समादर से ग्रहण किया था। राजा राम कृष्ण की प्रधान स्त्री के संग एक आसन में बैठा कर मातृ स्नेह प्रकाश पूर्वक, स्वयं ताड़ का पंखा हाथ में लेकर मेरी स्त्री को पंखा झलती थी?

"तो छिन्न मलिन वस्त्र पहनी हुई भी जब मेरी स्त्री ने केवल चरित्र गुण से देश के सब प्रधान उच्च कुल परिवार की कुलवधुओं के निकट इस प्रकार आदर पाया है, तब राय बहादुर राजा

बहादुर की उपाधि क्रय करने का मुझे कोई प्रयोजन नहीं दिखाई देता।

"देशके सब निम्न श्रेणीके मनुष्य अब बड़े आदमी होकर केशव लाल, कृष्ण लाल, महेन्द्र लाल, यादवेन्द्र इत्यादि बड़े २ भद्रोचित नाम धारण करते हैं उनको ही राजा बहादुर राय बहादुर की उपाधि का प्रयोजन है। कारण इन लोगों के पिता पितामह के विषय का अनुसन्धान करने से, दधि राम या वान्छा राम इत्यादि इस प्रकार का नाम निकल पड़ता है।

"इन सब दधि राम और बान्छा राम के पुत्र पौत्र गण को भद्रोचित नाम धारण करने में, किम्बा राय बहादुर राजा बहादुर की उपाधि पाने में मैं उनको कभी बाधा नहीं देता। निम्न श्रेणी के मनुष्य जितने ही भद्र होते हैं, उतना ही देश का मङ्गल है मेरी प्रजा माधव दास के पुत्र जगा और रूपा को मैंने अब अपने ज्येष्ट भ्राता का पद दे दिया है। उनको मैं भद्र श्रेणी मे प्रविष्ट करूंगा कारण वह ही केवल मेरे पिता की विपद के भागी हो कर उनके सङ्ग ही सङ्ग रहे थे। किन्तु जगा और रूपा ने जिस पथ का अवलम्बन करके भद्र

समाज में आकर प्रवेश किया, राय बहादुर उपाधि धारी दधि राम और बाञ्छा राम के वंश वाले उसी पथ का अवलम्बन कर के भद्र समाज में मिलते, तो उनका विशेष गौरव होता। चरित्र गुण द्वारा मनुष्य का आदर होने से देश का मङ्गल होता है। हमारे देश के मनुष्यों के पास रुपया होने से वह राय होते हैं। किन्तु मनुष्यत्व न रहने से मनुष्य बंदर कहा जाता है। सुतरां मनुष्यत्व हीन धनिकों की सन्तान राय बहादुर होने से मनुष्य उनको राय बन्दर कहना समझते हैं तब राय बहादुर और राय बन्दर एकही बात है।

"मेरा पत्र बहुत बड़ा लम्बा चौड़ा हो गया है। अतएव और दूसरे विषयों को पंजाब में पहुंचकर लिखूंगा। यह मत सोचना, कि बङ्गदेश से मेरा अनुराग नहीं है। दो तीन वर्षों पर एक २ बार बङ्गदेश में आऊंगा।

"अपने परिवार की अवस्था के सम्बन्ध में दो एक बात की इच्छा होती है। दो वर्ष हुए मेरा एक पुत्र जन्मा था। कमला देवी के पुत्र क्षेत्र नाथ ने मेरी स्त्री की सब से छोटी बहिन से विवाह किया है।

वह सब ही अब मेरे घर में हैं। राम सिंह और लक्ष्मण सिंह भी सपरिवार हमारे संग हमारे घर में ही रहते हैं।

"लोक नाथ को बङ्ग देश के मनुष्यों पर अत्यन्त घृणा है। वह बङ्ग देश को नरक समझते हैं उन के पड़ोसी गण ने उन की जननी के सम्बन्ध में मिथ्या कलंक प्रचार किया था, उसी से बंगाली जाति पर उन को विशेष घृणा का उदय हुआ है। वह बंग-देश में विवाह करने में भी प्रथमतः सम्मत नहीं हुए थे पश्चात् मेरे, कमला देवी और लक्ष्मण सिंह के कई प्रकार से समझाने पर मेरी स्त्री की छोटी बहिन के साथ विवाह किया है।

"राम सिंह की स्त्री को हम और मेरी स्त्री दोनों ही मा कहते हैं वह भी हम लोगों पर सन्तान के समान स्नेह करती हैं। राम सिंह अब भी मेरी स्त्री को नानकू कहते हैं। मेरी स्त्री प्रत्येक दिन अपने ही हाथ से रामसिंह की भांग बना देती है। उसके भांग न घोंट देने से राम सिंह के मन के अनुसार भांग नहीं बनती है।

"मैं कभी कभी अपनी स्त्री को रामकृष्ण अधिकारी

कह कर पुकारता हूं। तब वह भी मुझे सम्बन्धी कह कर सम्बोधन करती है।

प्रत्येक तीसरे प्रहर को मैं, मेरी स्त्री, रामसिंह, लक्ष्मण सिंह, उनका परिवार, कमला देवी, चेतनाथ और उनकी स्त्री - हम सब ही एकत्र होकर, अपनी खिड़की के पुष्करिणी घाट पर जाकर बैठते हैं। तब हम को बड़ा आनन्द बोध होता है। यहां बैठ कर रामसिंह प्रत्येक तीसरे प्रहर को एक ग्लास भांग पीते हैं। उनके भांग पीने के आध घन्टा के पश्चात ही उनका मुख खुलता है। तब वह देवी सिंह को और देवी सिंह के पिता, माता, भ्राता, भगिनी, मौसी, फूफी इत्यादि सब आत्मीय स्वजनों का नाम ले ले कर गाली बर्षाते हैं। प्रत्येक दिन एक प्रकार की भूमिका करके गाली बर्षाना आरम्भ करते हैं। "काला देवी सिंह मेरा नान्कू को बड़ा तकलीफ़ दिया।" "काला कुम्मत होकर का बेनामि इजारा लेकेर मुल्लक पयमाल किया।"

"इन्ही दो वाक्यों द्वारा भूमिका करके, देवीसिंह के सब आत्मीय स्वजनो पर राम सिंह गाली बर्षन करते हैं। तब हम सब ही बराबर हंसते हैं।

"लक्ष्मण सिंह और उनकी स्त्री अब भी कमला देवी को किस प्रकार से सुखी कर सकेंगे, इसी विषय में लगे रहते हैं। मैं समय समय पर लक्ष्मण सिंह से कहता हूं।

सृष्टस्त्वं वन वासाय स्वनुरक्तः सुहृज्जने।

"नाना विध के कष्ट यन्त्रणा के पश्चात हम लोग अब सुखी हो हैं। यदि मेरे पिता की ब्रह्मत्र ज़मीन को छुड़ा सको, तो उस ज़मीन का तुमही भोग करना। अपना पैतृक गृह भी तुमही को दिया। किन्तु ब्रह्मत्र ज़मीन का उद्धार कर सको, तो उसके कुछ अंश से मेरे पिता की अतिथि शाला को पुनः बार स्थापित करना।"

लि: श्री प्रेमानन्द गोस्वामी।

इस पत्र के भेजने के तीन दिन पीछे, प्रेमानन्द, राम सिंह, लक्ष्मण सिंह, चेतनाथ, जगा, रूपा और सत्यवती वृद्धा दासी सब ही अपने अपने परिवार, सहित पञ्जाब को चले गये।

देवी सिंह ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कार्य से बरखास्त हुए।

गंगागोबिन्द सिंह बाकी जाय के सिरश्ता में

लार्ड कार्नवालिस की गवर्नमेण्ट के समय काम करने लगे। किन्तु इस जीवन में उनको कभी सुख की निद्रा प्राप्त नहीं हुई। दूसरे का अनिष्ट करने से इस जगत में कोई शान्ति नहीं पा सक्ता।

समाप्त।

चक्कलू लाल ने छाप कर प्रकाश किया।

APPENDIX

KEY TO DEWAN GANGA GOVINDA SING.

NOTE 1

The Ray Royan was the regular channel of such communication as require the interposition of a native, and not Ganga Govind Sing, whose dismission from the Calcutta Committee had rendered him an improper person to transact affairs of such moment to the company—*Extract from the Company's General Letter to Bengal, the* 4*th July* 1777.

NOTE 2

PARA 50. The petition of Monshur Mookerjee, stiled the, dismissed farmer of Currickpore and Mongheer, pointed out to our particular notice in your Revenue letter per Syren, exhibits another instance of loss to the company, occasioned by that duplicity which has been practised by our servants during the late administration, in letting and holding of lands and farms in Bengal.

51. We find the circumstance which occasioned Mookerjee's petition, was a complaint made by the Ray Royan that a balance of 13,000 Rupees was due from him as the dismissed farmer of Currickpore and Mongheer, and that the Khalsa peons had been sent to demand the money, but were interrupted by Mr Wordsworth. To this charge Mr. Wordsworth, who had been an assistant at Mongheer, replies, that the Ray Royan must have been misinformed, because Dundhu Bahadur and Kerparam Ray were the two farmers dismissed from Currickpore and Mongheer, and that the facts were too notorious to be doubted. Mookerjee also declares, on his examination; that he was Mr. Bateman's servant, and not the farmer of the district in question; that Mr. Bateman was collector, Dundhu Bahadur farmer of one Pergunnah and Kerparam of the other; and that at Mr. Bateman's request he (Mookerjee) became security for payment; that he never saw Dundh Bahadur, that Kerparam was one of his own people, that he believes no such man as Dundhu Bahadur exists in Bengal; and that he was security only for Mr. Bateman. That Mr. Bateman gave in proposals under the seals of Dundhu Bahadur and Kerparam, that seals were cut in the above mentioned names, and affixed to

the Kabuliats by Mr. Bateman's Moonshy, who wrote the Kabuliats, and always kept the seals in his own hands; that Mr. Bateman had the possession, and enjoyed the profits of the farms, and paid him 200 Rupees per month as his Muttasudie; that Mr. Bateman told him Dandhu Bahadur and Kerparam were only nominal persons; that on asking Mr. Bateman if the two Pergunnas were his own, he replied, that he had one share in Mongheer, and Mr. Vansittart two shares; but that he was the sole proprietor of Currickpore, that the Mehals or district having been put under the Council at Moorshedabad, Mr. Baber told the petitioner, that Mr. Bateman was not to receive the profits that year, but that they (meaning the said Council) were to receive the advantages arising therefrom, and that Mr. Baber proposed his continuing in the Mehal; and that he should give him a teep for 10,000 Rupees, which he declined, but to which he afterwards consented.

52. The orders of your Board on the occasion were, that a copy of Mookerjee's petition should be transmitted to Mr. Bateman, and so much of it to Mr. Baber as had relation to that gentleman, and that his answer thereto should be required; but, to our astonishment, we find Mr. Barwell objects to

this mode of admitting on the records matter of a tendency foreign to the public business &c.—*Extract from the Court of Director's letter, dated 30th January* 1778.

NOTE 3

37. A further instance, in which the conduct of the Governor-General and Mr. Barwell, as a majority of the Board, appears to us not only improper, but highly reprehensible, is that of rejecting the advice of our standing counsel, and refusing to concur in filing a bill of discovery to oblige Mr. Thackeray to declare who were the persons concerned with him in furnishing the company with elephants.

38. We observe that our late President states to the council, in consultations of the 6th September 1774, that the farmers of Sylhet had made a tender to him of about 66 elephants at 1,000 Rupees per each, that the Board esteemed it an advantageous offer, and accepted the elephants under certain conditions.

39. We find that the farm of Sylhet was granted by the Committee of Circuit, that the company's advance to the farmers of Sylhet, of 33,000 Rupees for elephants was received by one of the members

of that committee. It has however since appeared, that the ostensible farmers, or persons named in the committee's settlement, never existed; and that Mr. Thackeray, the company's Resident, at Sylhet, was the real farmer under fictitious names.—*Extract from Company's General Letter to Bengal, dated 28th November* 1777.

NOTE 4

36. In our letter of 5th February 1777, we expressed our apprehensions that a sudden transition from one mode to another, in the investigation and collection of our revenues, might have alarmed the inhabitants, lessened the confidence in our proceedings, and been attended with other evils; yet as we were led to hope that such information had been obtained as would enable us to ascertain, with sufficient degree of precision what revenues might be collected from the country without oppressing the natives, we felt some satisfaction in considering those evils as at an end, and proceeded to give such instructions as appeared to us necessary for your guidance in a future settlement of the lands.

37. In this state of the business our surprise and concern were great, on finding, by our Gover-

nor-General's minute of 1st November 1776, that, after more than seven years investigation, information is still so incomplete, as to render another innovation, still more extraordinary than any of the former, absolutely necessary, in order to the formation of a new settlement.—*Extract from Company's General Letter to Bengal, 4th July* 1777. . .

NOTE 5.

"In the late proceedings of the Revenue Board?" observes the majority of the Council "there is no species of peculation from which the Hon'ble Governor-General has thought it right to abstain.—*Beveridge's History of India, page* 383.

NOTE 6.

45. We observe that our Attorney was served with notice of trial the 14th November, about twenty days after the death of Colonel Monson, and to our cost we find, that the majority of the Council consisting then of the Governor-General and Mr. Barwell, instead of preparing for a proper defence, deserted the cause, and thereby subjected the company to the payment of the money (claimed by Thackeray) . . . .

48. Upon the whole of this transaction, as we fully approve the conduct of General Clavering and Mr. Francis, because it has been, in our opinion, highly meritorious, so we are compelled to declare, that the behaviour of our Governor-General and Mr. Barwell has, in this instance, been highly improper, and inconsistent with their duty.—*Extract from the Company's General Letter to Bengal, dated the 28th November* 17 77.

NOTE 7

131. From a view of your conduct towards the Ranny of Burdwan, and the Ranny of Radshahye, and her adopted son Rajah Ramkissen, and from your interesting debates concerning those persons, we have already been induced in the 92nd paragraph of our letter of the 4th March, to express our disapprobation of every mode of vexatious interference in the private concerns of the zemindars, and of the idea of disturbing them in the quiet enjoyment of their possessions; and as the Rannies above-mentioned appeared to have suffered an unusual degree of inconvenience and distress since, by the death of Colonel Monson the Governor-General and Mr Barwell became a majority of the Board, we now direct,

as the most eligible mode of doing justice to all parties, that soon as conveniently may be, after the number of our Council shall be complete, and consistof Five Members, the whole of the proceedings of our Council relative to the Ranny of Burdwan and to the Ranny of Radshahye, be taken into your most serious consideration, and that to the utmost of your power the most impartial justice be rendered to the zemindars above-mentioned; and if it shall appear to the Three Members of the Board, that the requisitions and injunctions of the Governor General and Mr. Barwell respecting the Ranny of Burdwan, were improper and the re-establishment of Bridjokishore Ray who had been removed by the late majority, and the placing of a military force upon the Raja's house; were acts of oppression, or that the dispossession of Ranny of Radshahye and her adpoted son, and the distinction in her disfavour, respecting out-standing balances were unwarrantable proceedings, we direct that you make such reparation to those zemindars as their respective cases shall require--*Extract from Company's General Letter, dated* 23*rd December* 1778.

The Ranny of Burdwan' says Mr. Richard Barwell the most dishonest and unscrupulous member

of the Council "is a vile prostitute."—*Extract from Barwell's letter to Mrs. Mary Barwell.*

NOTE 8.

But to pursue this melancholy but necessary detail. I am next to open to your Lordships, what I am hereafter to prove, that the most substantial and leading yeomen, the responsible farmers, the parochial Magistrates and chiefs of villages were tied two and two by legs together; and their tormentors, throwing them with their heads downwards over a bar, beat them on the soles of the feet with ratans, until the nails fell from the toes; and then attacking them at their heads, as they hung downwards, as before at their feet, they beat them with sticks and other instruments of blind fury; until the blood gushed out at their eyes, mouths and noses.

Not thinking that the ordinary whips and cudgels even so administered, were sufficient, to others (and often also to the same who had suffered as I have stated) they applied instead of ratan and bamboo, whips made of the branches of Bale trees (बेल) a tree full of sharp and strong thorns, which tear the skin and lacerate the flesh

far worse than ordinary scourges—*Edmund Burke, page* 188.

NOTE 9.

Your deliberations on the inland trade have laid open to us a scene of the most cruel oppression, which is indeed exhibited at one view of the 13th article of the Nabab's complaints mentioned thus in your consultation of the 17th October 1764 . . . . . We shall, for the present, observe to you, that every one of our servants concerned in this trade, has been guilty of a breach of this covenant and a disobedience to our orders. In your consultations of the 3rd May, we find among the various extortionate practices, that most extraordinary one of "*Barjaut*" or forcing the natives to buy goods beyond the market price, which you there acknowledge to have been frequently practised.

In your resolution to prevent this practice, you determine to forbid it, but with such care and discretion, as not to affect company's investment, as you do not mean to invalidate the right derived to the company from the Firman which they have always held over their weavers. As the Company are known to purchase their investment by ready

money only, we require a full explanation how this can affect them or how it could ever have been practised in the purchase of their investment, which the latter part of Mr. Johnstone's minute entered in consultation the 21st July 1764 insinuates; for it would almost justify a suspicion, that the goods of our servants have been put off to the weavers in part payment of company's investment: therefore we direct you to make a rigid scrutiny into the affairs, that we may know that any of our servants or those employed under them, have been guilty of such breach of trust, that their names and all the circumstances may be known to us.—*Extract of a letter from the Court of Director's to the President and Council at Fort William in Bengal, dated 28th December* 1765

NOTE 10.

The following is the translation of the letter addressed to Sheer Ally Khan, Phousdar of Purneah by Messrs. Johnstone. Hay and Bolts recorded at Fort William consultation, dated 17th December 1762.

Our Gamastah Ramcharan Das, being gone into those parts, meets with obstructions from you, in

whatever business he undertakes, moreover you have published a prohibitions to this effect, that whoever shall have any dealing with the English you shall seize his house and lay a fine upon him. In this manner you have prohibited the people under your jurisdiction. We were surprized at hearing of this affair, because that the Royal Firman which the English nation is possessed of, is violated by this proceedings; but the English will by no means suffer with patience their Firman to be broke through. We therefore expect that, upon the receipt of this letter you will take off the order you have given to the Ryots, and in case of your not doing it, we will certainly write to the Nobab, in the name of the English, and send for such an order from him, that you shall restore fully and entirely whatever loss the English have sustained or shall sustain, by this obstruction: and that you shall repent having thus interrupted our business, in despite of the Royal Firman. After reading this letter, we are persuaded, you will desist from interrupting it, will act agreeably to the rules of friendship, and so that your amity may appear, and by no means stop the company's Dustack.

NOTE 11.

* * . . * Upon Rammants's going out of the Governor's Chamber, and coming into the Hall, he was suddenly met by a party of Sepoys with fixed bayonets, commanded by two black officers* named Sontose and Dil Mohomed, who in that instant seized him; and not permitting him to ride in his palanqueen, marched him on foot through the town, from the Governor's to his own house, where they kept him in strict confinement, with guards upon his doors, and even in his innermost appartment, not permitting any person but his own menial servants to have access to him . . . . . He remained in that situation until Sunday the 3rd May 1667; in the evening of which day he sent to inform the writer (Mr. Bolts) he had just received private intelligence that order had been received from Governor Verelst, then with the Nobab at Murshedabd to Mr. Cartier then at Calcutta to deliver him (Ramnaut) up to the Nobab for confinement. . . . . . .

By letter afterwards received from him (Ramnaut) it appeared, that he was actually transferred to the Nobab at Murshedabad for confinement, during which time his family, at Maldah was put to the greatest

hardship and distress.—*Bolts on India affairs, page 101, 102 and 103.*

NOTE 12.

Accordingly in plain terms, he (Devi Singh) opened a logal brothel, out of which he carefully reserved the very flower of his collection for the entertainment of his young superiors; ladies recommended not only by personal merit, but according to the Eastern custom, by sweet and enticing names which he had given them. For, if they were to be translated, they would sound.—Riches of my life.—Wealth of my soul.—Treasure of perfection.—Diamond of splendour.—Pearl of Price ? Ruby of pure-blood and other metaphorical descriptions, that, calling up dissonant passions to enhance the value of the general harmony, heightened the attractions of love with the allurements of avarice. A moving Seraglio of these ladies always attended his progress, and were always brought to the splendid and multiplied entertainments with which he regaled his Council.—*E. Burke, pages* 177-78.

NOTE 13.

Even in these days, instances are not wanting, which will show that when the estate of any minor zemindar, or any minor independent native chief, is placed under the management of any stranger or foreigner, the nearest relations of such minor experience great hardship, whereas the manager's friends and relations are well provided at the expense of such estate or state.

NOTE 14.

On the same principle, and for the same ends virgins, who had never seen the sun, were dragged from the inmost sanctuaries of their houses; and in the open court of justice, in the very place where security was to be sought against all wrong and all violence (but where no judge or lawful Magistrate has long sat, but in their place the ruffians and hangmen of Warren Hastings occupied the bench) these virgins, vainly invoking heaven and earth, in the presence of their parents, and whilst their shrieks were mingled with the indignant cries and groans of all the people, publicly were violated by the lowest and wickedest of the human race. Wives were torn from the arms

of their husbands and suffered the same flagitious wrongs, which were indeed hid in the bottoms of the dungeons in which their honor and their liberty were buried together. Often they were taken out of the refuge of this consoling gloom, stripped naked, and thus exposed to the world, and then cruelly scourged; and in order that cruelty might riot in all the circumstances that melt into tenderness the fiercest natures, the nipples of their breasts were put between the sharp and elastic sides of cleft bamboos. Here, in my hand, is my authority; for otherwise one would think it incredible.—*Edmund Burke's speech, page* 189-90.

Children were scourged almost to death in the presence of their parents. This was not enough. The son and father were bound close together, face to face, and body to body, and in that situation cruelly lashed together, so that the blow which escaped the father fell upon the son, and the blow which missed the son wound over the back of the parent—*Ibid.*

NOTE 15.

The peasants were left little else than their families and their bodies. The families were disposed f.

It is a known observation, that those who have the fewest of all other worldly enjoyments are the most tenderly attached to their children and wives. The most tender parents sold their children at market, The most fondly jealous of husbands sold their wives. The tyranny of Mr. Hastings extinguished every sentiments of father, son, brother and hubands!

I come now to the last stage of their miseries everything visible and vendible was seized and sold Nothing but the bodies remained.—*Edmund Burke's speech, page* 186.

NOTE 16.

The variety and frequent changes of those employed in the collections may be included in the causes of this discontent. In 1188 Kishen Prosad was appointed Dewan and collector of Rungpore by Rajah Devi Singh. In Bhadoon he was turned out and Hur Ram was appointed in his stead and continued to the end of that year. In 1189 after three months Hur Ram refused to take upon him the responsibility for revenues of the District, and in Assar he was succeeded by Surjanarain. In Aughan the Rajah's brother Bekadre Singh (the name is

unintelligible in the original papers found by the author in the Board of Revenue) arrived and was invested with the management of the collections in which he exercised every kind of severity and rigour." Surjanarain continued to act as Dewan. The zemindars of Kakina and Tepah fled the country and both their zemindaries were given in farm to Surjanarain.—*Extract from Paterson's Report May* 1783.

NOTE 17.

His (Ganga Govind) conduct then was licentious and unwarrantable, oppressive and extortionary. He was stationed under us to be an humble and submissive servant. His conduct was everything the reverse.

In one attempt to release fifteen persons illegally confined by him, we were dismissed our offices; a different pretence was held out for our dismission, but it was only a pretence.—*Evidence in the trial of Hastings.*

NOTE 18

It was then I was under the necessity of sending Lieutenant Macdonald the order No. 5. The assu-

ming a power that affects life and death is never to be justified, but on the greatest emergencies. My situation, as I observed to you before, was the most critical that ever a Collector was placed in; the state of the country required the most active and vigorous exertions in order to quiet it. I had no time to wait for orders from my superiors, and had I ever given the insurgents an idea that I was deficient in authority to punish them, I never could have got the better of the insurrection.—*Extract from Mr Richard Goodlad's Report, dated Rungpur, March* 1783.

Mr. E. G. Glazier in his report on the District of Rungpur observes:—"Whatever Devi Singh's enormities may have been, nothing is clearer from the whole history of the transactions than that Mr. Goodlad knew nothing of them."

I think Mr. Glazier is sadly mistaken in thinking that there was nothing to show that Mr. Goodlad knew anything about the oppression exercised by Devi Singh. It is quite evident from Mr. Paterson's report that both Devi Singh as well as Mr. Goodlad tried to suppress evidence during the enquiry held by him.

Mr. Paterson observes:—"Upon my first arrival the Ryots of Futtehpur complained against the

article of Batta and Durcevilla. I referred them to Mr. Goodlad as I had none of my people with me; and he referred them back to the Rajah (Devi Singh) who immediately put the zemindar Seeb Chandra Choudry in irons, charging with exciting the Ryots to complain to the Ameens. This was my reason when I requested your orders what measure I should take if any one was punished for complaining to me."

Elsewhere he (Mr. Paterson) observes "I had entrusted these accounts to Mr. Goodlad who promised to return them after taking copies. But Mr Goodlad went away without returning them, and I now find they are with the Rajah (Devi Singh) in Calcutta.,

[Rajah filed]. "different accounts at various times differing very materially in the *Jama* and *Wassil*. with an idea I presume to perplex me to delay my reports.'

These facts clearly prove that Mr. Goodlad also tried to suppress evidence during the enquiry.

Mr. Glazier for reasons best known to himself in page 71 (Appendix A) of his report on Rungpur says "that enclosures 1, 3, 4, 5, 7 and 9 omitted.' These enclosures were the successive orders (*Hookum-*

namah) issued by Mr. Goodlad during the insurrection. And the order or *Hookum namah* No. 5 would speak very much against Mr. Goodlad as he himself admitted it.

NOTE 19.

A party of Sepoys, under Lieutenant Macdonald, marched to the north against the principal body of insurgents; a spy caught by the Lieutenant was hung in open market, and a Jemadar was despatched against the retreating enemy. The decisive battle of the campaign was fought near Patgram on the 22nd February; the sepoys disguised themselves as Burkundazes by wearing white cloth over their uniform, and by that means got close to the insurgents, who were utterly defeated: sixty were left dead on the field, and many were wounded, and taken prisoners.—*Glazier's Report on Rungpur, page* 22.

NOTE 20.

It was recommended to me in my instruction to call upon the prisoners taken in the insurrection to account for their conduct, and in case they complained of oppression, to enquire into the

truth of it by an examination of both parties,

Mr. Goodlad accordingly delivered over to me 22 prisoners. As I understand that many had been taken, I naturally concluded that there would appear against these men some circumstances of guilt, particularly glaring which had occasioned their being singled out from the rest. But to my surprise, I found upon examination, that they were neither ring-leaders nor taken in any act or situation that could be construed against them. They were for the most part coolies, the lowest of mankind, taken many of them out of their own houses or at plough. This appears from the declaration of Telukchand who apprehended some of them and of Shaik Mahomed Mollah who likewise took several * * * * *

The Burkundazes and horsemen who were detached in parties to desperse the insurgents, made an universal plunder and trade of the people that fall into their hands. These who could pay were set free; those who had it not, were detained as proof of their diligence. Upon my expressing my surprize to Shaik Mahomed Mollah that he should seize people against whom he could bring

no charge of guilt ; he explained himself in this manner.

That the insurgents assembled in many parts and went from place to place levying contributions and obliging the Ryots to join them. That upon information of their appearing in any village, he detached a party against them, that upon approach of such party the insurgents always fled, and that his people seized inhabitants of the place when the insurgents had disappeared, that he was not to judge of their innocence or delinquency, that in general confusion like this no distinction could be made at the time.—*Extract from Mr. Paterson's Report* (*A*) *dated Rungpur* 18*th May* 1783.

NOTE 21.

Two commissions sat on this insurrection, and in February 1789, in the time of Lord Cornwallis, the final orders of Government were passed. Devi Singh got off scot-free, with the exception of the loss of his money. Har Ram, a native of Rungpur, who had been the sub farmer under him, and whose oppression had brought about the rising, was sentenced to one year's imprisonment, after that time to be

banished from the District of Rungpore and Dinagepore. Five Ryots, the ring-leaders (they were not ring-leaders but Mr. Glazier says so) of the insurgents, were also banished; two of them, men of Dimla, had apparently been in confinement since the time of the insurrection.—*Glazier's Report on the District of Rungpur, page* 22.

———